पुस्तकालय
सं०......
1248
नई दिल्ली-२६

हमारी समाज व्यवस्था

मानवीय प्रवृत्तियों, स्वाभाविक चेष्टाओं, तथा जीवन-समस्याओं को देखते हुए हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि मानव वैयक्तिक प्राणी नहीं अपितु इसका जीवन-व्यवहार अन्य प्राणियों के साथ बंधा है। अतएव मानव के लिये समाज-व्यवस्था की अत्यन्त आवश्यकता है। और वह व्यवस्था भी इस प्रकार की हो जो उसकी समस्त आवश्यकताओं को पूर्ण कर सके तथा समस्याओं को सुलझा सके।

मानवों की समस्याएं क्या क्या हैं यह एक अत्यन्त गम्भीर एवं विस्तृत विषय है। सामान्यतया मनुष्य की सर्व प्रथम आवश्यकता उसके लिये परिवार है। परिवार भी ऐसा जो स्थाई रूप से उसके जीवन से सम्बन्धित सभी कार्यों के सम्पन्न कराने मे सहायक हो। फिर उस परिवार के लिये भी एक ऐसे समाज की आवश्यकता होती है जो उस परिवार की सुख समृद्धि बढ़ाने तथा उसके संरक्षण में पूर्ण रूप से सहायक हो। साथ ही उसके द्वारा मानव-परिवारों की

निम्न प्राथमिक आवश्यकताएं भी पूर्ण हो सकें । यथा:- बच्चों की शिक्षा के लिये सुयोग्य शिक्षक, जीवन निर्वाह के लिये अन्नादि पौष्टिक पदार्थ, विभिन्न कार्यों के सम्पादनार्थ अनेक प्रकार के उपकरण, कला-कौशल की वृद्धि के लिये कुशल शिल्पी तथा कलाकार इत्यादि ।

भारतीय ऋषि महर्षियों ने उपर्युक्त उद्देश्य को लक्ष्य में रखते हुए, सृष्टि के आदि काल से ही, कर्म तथा ज्ञान के ईश्वर-प्रदत्त-भंडार वेद से मानव जाति के कल्याणार्थ एक ऐसी समाज व्यवस्था का निर्माण किया था जो मानव जाति की सभी वैयक्तिक तथा पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने तथा समस्याओं को सुलझाने में सर्वथा समर्थ थी । वह थी हमारी वर्णाश्रम व्यवस्था । इस व्यवस्था का सर्व प्रथम अंग है ब्रह्मचर्याश्रम । यह आश्रम ही सब वर्णों तथा आश्रमों की आधार शिला है । सब शक्तियों का यह संचय केन्द्र है । इससे ही शक्ति ग्रहण कर मनुष्य भावी जीवन संघर्षों पर विजय प्राप्त कर सकता है । यदि आप इन आश्रमों (ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास) तथा वर्णों (ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) की पद्धति को ध्यान पूर्वक देखें तो निश्चय ही वे त्याग और तपस्या की साक्षात् जीवन यात्रा दृष्टिगोचर होंगे । और यह भी स्पष्टत: प्रतीत होगा कि ये समस्त वर्ण तथा आश्रम पारस्परिक सहायता एवं सहयोग के सूत्र में पिरोये हुए हैं । इन वर्णों और आश्रमों का आदर्श आरंभ से अन्त तक त्याग और तपोमय जीवन ही है । ब्रम्हचर्य काल की समाप्ति पर जो

स्नातक जिस कार्य भार को सम्भालने योग्य होता था, उसे वही कार्य सौंपा जाता था। सारे के सारे मनुष्य एक मानवता के सूत्र में बंधे थे। न देश भेद था, न जन्म भेद, न अर्थ के कारण ही भेद होता था। जैसे जिसके गुण, कर्म, स्वभाव तथा योग्यतादि होते थे, वैसा ही उसे पद दिया जाता था। वह भी उसे अपना कर्त्तव्य समझ कर पूरा करता था।

इस पद्धति का विरोध करने वाले तनिक सोच कर बतायें कि किस देश को विद्वानों की आवश्यकता नहीं? और वह भी ऐसे त्यागी विद्वानों की, कि जिनके पास जीवन निर्वाह के लिये एक दिन से अधिक का अन्न तक न रहता हो। किस देश को अपने संरक्षण के लिये वीर सैनिकों की आवश्यकता नहीं? किस देश को व्यापारी तथा अन्न उत्पन्न करने वाले कृषक नहीं चाहिये? और किस देश को कुशल शिल्पी तथा कलाकारों की आवश्यकता नहीं है? सभी देशों को इन सब की आवश्यकता है। बिना इनके किसी भी देश का काम चल सकना सम्भव नहीं। देश भेद से नाम इनका चाहे कोई कुछ भी क्यों न रखले परन्तु इनकी आवश्यकता एवं उपयोगिता से कोई देश इन्कार नहीं कर सकता।

वर्तमान समय में इस गुण, कर्म तथा स्वभाव के आधार पर निर्मित वर्ण व्यवस्था का स्थान जन्म जाति ने ले लिया है। इस जात्याभिमान के कारण ही हमारे समाज में छुआछूत का भयंकर विषैला रोग फैला। परिणामतः हिन्दू जाति के अनेकों लाल विधर्मियों के जाल में फँस कर इस हिन्दु समाज को सदैव के लिये

तिलांजलि दे गये, देते जा रहे हैं, और अनेकों देने के लिये प्रस्तुत हैं। यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया तो परिणाम हिन्दु जाति का सर्वनाश ही होगा। समय रहते ही चेत जाना बुद्धिमानी है। "फिर पछताये होता क्या जब चिड़िया चुग गई खेत"। अतः हिन्दुओं! जागो, आने वाली आपत्ति से सावधान !

■ देव प्रकाश

आरंभिक प्रतिवेदना

भगवान् का विद्रोही कौन ?

जो शासन के कानून को भंग करता हैं उसे राज्य विद्रोही कहते हैं। जो सृष्टि नियमों की अवहेलना करता है, वह सृष्टि भंजक है। जो नागरिकता के नियमों को तोड़ता है, वह नगर का शत्रु है, जो माता-पिता की आज्ञाओं का उल्लंघन करता है, वह माता-पिता का ना

इसी प्रकार इन सबसे बड़ा विद्रोही और है, जिसे भगवान का विद्रोही कहते हैं। भगवान का विद्रोही यूं तो जो भी भगवान के नियमों को भंग करता है, वह भगवान का विद्रोही है। मगर सबसे अधिक भगवान का भयंकर विद्रोही वह है, जो मनुष्य की भगवद्-प्रदत्त शक्तियों पर कानून से, भय से, बल से, अधिकार से, राज्य की शक्ति से, धर्म की आड़ से, विद्या के प्रभाव से प्रतिबन्ध लगाकर मनुष्यों को मानवता के अधिकारों से वञ्चित कर देता है और उनके विकास के सभी मार्गों पर ताला लगा देता है :—

वह है भगवान् का परम विद्रोही

महाभारत काल के पश्चात् इस जगत्गुरु ज्ञान के भण्डार भारत में एक ऐसा वर्ग उत्पन्न होगया, जिसने करोड़ों मनुष्यों पर जन्म-जात के कल्पित गोरख-धन्धे के आधार पर बलात् यह प्रतिबन्ध लागू कर दिया कि इन करोड़ों मनुष्यों को न तो शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है, न शिक्षा सम्बन्धी बात सुनने का ही अधिकार है, न इन्हें उन देवताओं को देखने का ही अधिकार है, जिन्हें हम पूजते हैं, न उन मार्गों पर चलने का अधिकार है, जिन पर हम चलते हैं न उन पदार्थों के भक्षण करने का अधिकार है, जो इस धरती माता की उत्तम देन है, न स्वर्ण और चांदी के आभूषण पहनने का अधिकार है। इन्हें जात्यभिमानी उच्च कहलाने वाले लोगों के साथ छूने तक का अधिकार नहीं, नगर में मकान बनाने और किसी प्रकार की सम्पत्ति उपार्जन करने का भी अधिकार नहीं, अपनी प्यारी सन्तान के शरीर पर फटे-पुराने चिथड़े धारण करने के अतिरिक्त ठण्ड से बचाव करने वाला गर्म कपड़ा पहनने का अधिकार नहीं, कुवों से पानी भरने, भगवान् की भूमि पर पास बैठने, उत्तम कहलाने

वाले का नाम उच्चारण करने तक का अधिकार नहीं।

धर्म का ज्ञान प्राप्त करना तथा वेद का सुनना भी वर्जित है। न केवल सुनना ही अपितु इससे बढ़कर यदि किसी ऐसी वहिष्कृत जाति के व्यक्ति का वेद सुनने का विचार भी न हो--ऐसे अकस्मात चलते हुये किसी वेद पाठी का शब्द उनके कान में पड़ जाय, तो उस ना करदा गुनाह (न किये पाप) पर भी कान में राल और सीसा पिघलाकर डाला जाता था। कई लोगों को तो नगर में आने नहीं दिया जाता था, और कई एक को नगर में आने की आज्ञा थी। मगर फासिला निश्चित कर रक्खा था--कि द्विज से इतनी दूर उसे रहना ही चाहिये।

एक और प्रथा थी जो दास प्रथा के नाम से प्रसिद्ध थी। आज कल भी उसके कुछ चिन्ह राजाओं और ठाकरों के घरों में पाये जाते है। एकदम जब एक मनुष्य दास बन गया फिर जब तक उसकी सन्तान का सिलसिला चलता रहता तब तक सब पर मालिक का पूरा अधिकार रहता। इन दासों और दासियों से क्या-क्या काम लिए जाते-उनको यहां लिखना उचित नहीं। इतनी मानवता की अवहेलना, इतनी बेइज्जती और वह भी मानव के हाथों उनकी विलासता और उनकी दुष्ट वृत्तियों को पूरा करने के लिए। कितना दर्दनाक दृश्य है आत्म हीनता का नग्न नृत्य और पराकाष्ठा है।

ऋषि दयानन्द ने कृपा करके सब मनुष्यों को सन्मार्ग दिखा दिया है। ए मनुष्यों! भगवान से विद्रोह मत करो-उससे डरो, इतिहास उठाकर देखो, इस विद्रोह का तुम्हें क्या प्रतिफल मिला है। अब भी मनुष्य के साथ घृणा और अमानवता के व्यवहार को त्याग दो-

और इस छूतछात के कलंक को भारत के माथे से दूर करदो। प्रत्येक राम और कृष्ण को मानने वाला तुम्हारा भाई है। अन्यथा परिणाम तुम्हारे समक्ष है। अब भी जागो और भाई को भाई समझो।

---देवप्रकाश

मनुष्य मात्र को वेद पढ़ने का अधिकार

इस विषय पर एक पुस्तिका लिखने के लिये मुझे परम सुधारक जनहित सेवी, कर्मनिष्ठ, तपस्वी श्री सन्त चरणदास जी (घन सोवा) ने आज्ञा की। मैंने लिखने की हां तो करली परन्तु जब लेखनी को हाथ में लिया तो भीतर से किसी ने कहा कि "क्या लिख रहे हो, मैं तो तुम्हारा साथ नहीं दूंगा" यह मन ने अपना संकल्प सामने रखा ऐसी धारणा उपस्थित करते ही मनने इन्द्रियोंका साथ छोड़ दिया। और यह कहकर कि "यह भी कोई लिखने की बात है कि आंख को देखने का अधिकार है, कान को सुनने का अधिकार है, जिव्हा को चखने का अधिकार है, नाक को सूंघने का अधिकार है। क्या ऐसे लिखने से लोग तेरी हंसी नहीं उड़ायेंगे और तुझे मूर्ख नहीं कहेंगे कि इस जमाने में ऐसी स्वतः सिद्ध बात के लिये एक पुस्तक लिख रहा है' ? मन न जाने कहां चला गया। इस मनके चले जानेसे मस्तिष्क शून्य होकर रह गया, स्मरण शक्ति ने जवाब दे दिया, आंखों ने देखना बन्द कर दिया, कानों ने सुनना छोड़ दिया और मैं जड़वत होकर बैठ गया। मन ने यह उदाहरण पेश किया कि "इन इन्द्रियों पर प्रतिबन्ध लगाने से जो तेरी अवस्था होगई है वही विश्व की हो

जायेगी। इससे तो मनुष्य सृष्टि बनाने का प्रयोजन ही खत्म हो जायगा। कौन समुदाय ऐसा है जो इन स्वतन्त्र सिद्धान्तों पर अड़चन डाल सके" ? मैं स्तब्ध होकर बैठ गया। रात्रि को जब पुनः मन ने अपना व्यापार आरम्भ किया तो मैंने सावधान होकर कहा कि "देखो इस समय करोड़ों मनुष्य ऐसे हैं जो इस प्रकार के विचार रखते हैं, जिन्होंने करोड़ों मनुष्यों पर प्रतिबन्ध लगा रखे हैं। मैंने मन से कहा "चलो मैं तुमको सैर करा लाता हूं"। मैं मनको मन्दिरों में ले गया। वहां उसने देखा कि मन्दिर में बिठाये भगवान के दर्शन करने वालों पर डन्डों का प्रहार(वार)हो रहा है। भगवानको तो ताले में बन्द कर दिया है और दर्शकों के खून से भूमि ने लाल वस्त्र पहन लिया है। मन ने मन्दिर के अधिकारियों से पूछा, यह क्या झगड़ा है, तो बोले "यह नीच लोग भगवानके दर्शन करके भगवान को अपवित्र कर देना चाहते हैं"। फिर मन को मैं आगरा के पास एक गांव में लेगया। मैंने कहा "देखो एक देवी को गांव के लोगों ने घेर रखा है देवी गर्भिणी है उस पर ऐसी लाठी वर्षा की कि वह बेचारी इस संसार से चल बसी और उसका गर्भभी पात हो गया"। लोगोंसे मन ने पूंछाकि क्या झगड़ा है ? एक मूछ तानेके कहा 'नीच जातिकी होने पर इस घमण्डन ने गिलट के बिछुवे पांव में पहन रखे है यह सवर्णों के बराबर होना चाहती है'। फिर मन को मैं रतलाम जिला के एक गांव में ले गया वहां बहुत बड़ा झगड़ा हो रहा था। एक बरात थी दूल्हे की लाश धरती पर पड़ी थी और बाराती घायल होकर हाहाकार कर रहे थे। मन ने पूंछा "इतना हल्ला क्यों होरहा है"?जाति अभिमानियों ने कहा कि "यह नीच होकर लाड़ाको घोड़ी पर चढ़ाकर और आगे बैन्ड बाजा बजा कर राजपूतों के गांव में से बरात निकालना चाहते थे"। फिर मैं मन को जिला देवास(मालवा) में ले

गया ।वहां क्या देखाकि एक कन्या है उसके सिर पर विष्ठा का घड़ा भरा रखा है । एक ने घड़े पर लाठी मार कर घड़े को तोड़ दिया सारी टट्टी उस कन्या के कपड़ों पर आ पड़ी । जब मन ने उस दृश्य को देखा कि कन्या की वह लोग क्या दुर्गति कर रहे हैं तो मन की आंखों से भी खूनके आंसू बह निकले, पूंछा'यह क्या है'। एक खिलाड़ी बोला 'यह जुमरा है होली का शेष भाग'। फिर मैं मनको दोपहर के समय एक कुवें पर लेगया । वहां एक दो वर्षका बच्चा प्यास के मारे तड़परहा है, यह जम्मू स्टेटका किस्सा है । एक ब्राम्हण पानीभर रहा था । लड़के के पिता ने ब्राम्हण के हाथ जोड़े और कहा कि 'मेरा यह लड़का प्यासके मारे मंररहा है महाराज ब्राम्हण देवता एकघूंट पानी का देदोमेरालड़का मरनेसे बच जायेगा' । मगर उस ब्राम्हणने कहाकि 'मेरालोटा नीच को पानी पिलाने से अपवित्र होजावेगा अतः मैं पानी नहीं पिलाऊंगा ; तेरे लड़केके लिये धर्म कैसे छोड़ दूं'? लड़का प्यासा हाहाकार करता मर गया, मगर ब्राम्हण ने अपना धर्म बचा लिया । मन भी बहुत हैरान हुवा कहनेलगा 'बस अब चलो'। मैंने कहा'जम्मू का एक दृश्य और देखलो' । फिर मैं मन को एक गांव में लेगया देखा कि कुछ लोगों को ब्राम्हण तथा राजपूत पकड़ेबैठे हैं और लोहे के दांतरे तपा रहे हैं और तपा हुवा दातरा उन लोगों की कन्धे पर लगा कर जलाकर एक चिन्ह बना रहे हैं और कह रहे हैं कि "तुम्हे यह ऐसा यज्ञोपवीत दे रहे हैं जो कभी टूटेगी नहीं" । इतने में एक पन्थी दौड़ा-दौड़ा आया और बड़ी प्रसन्नता से घोषणा करने लगा कि कुछ धर्म हितैषी सज्जनों ने उस दुष्ट रामचन्द्र का खात्मा कर दिया है जिसने इस नीच जाति को जनेऊ दिये थे । मन थकगया, मैंने कहा 'वापस जाना है चलो रास्ते में जिला होशियारपुर का भी एक

दृश्य देखते चलो" । मैंने एक घर के दरवाजे पर ले जाकर मनको खड़ा कर दिया । अन्दर से एक स्त्री और मनुष्य के रोने की आवाज आरही है । दोनों रो-रोकर कह रहे हैं 'हमने अपने अवज्ञाकारी लड़के को बहुत रोका कि तुम आर्य समाज में न जाओ वहां वशिष्टों और कबीर पन्थियों को शुद्ध किया जाता है । वह न माना बिरादरी ने हमें खारिज कर दिया, लड़कियां जवान हैं, क्या करेंगे, विवाह कहां होगा ? रोज दो मीलसे पानी लाकर कबतक निर्वाह करेंगे नाई बन्द हैं हजामत कहां से करावें धोबी बन्द है कपड़े कहां से धुलवावें,भंगी भी बन्द टट्टी कौन साफ करे, हाय इस लड़के ने हमें आपत्ति में डाल दिया कहां चले जायें' ? जब यह करुणा क्रन्दन दृश्य मन ने देखा तो विस्मित होकर रह गया । फिर मैं मन को उठाकर १०००वर्ष पहले के युग में ले गया । देखा कि एक गरीबकी जिव्हा काट रहे है ।पूछा तो एक शर्मा ने कहा "इसने वेद का शब्द उच्चारण किया था" (वेदोच्चारेण जिव्हाच्छदो) इस दोष में जिव्हा काट दी । फिर मन को दिखाया कि एक दीन को पकड़ कर राल और शीशा पिघलाकर उसके कान में डाल रहे हैं । मन ने पूछा यह क्या है तो कहा गया कि 'इसने वेद के शब्द सुन लिये थे तो उसका दण्ड श्रोत्र परिपूरणम मिला' । फिर एकको पकड़कर शरीरको चीर रहे थे तो मनके पूछने पर उत्तर मिला कि 'इसने वेद को धारण कर लिया था-तो 'धारणे शरीर भेदः इति' कानून के अनुसार दण्ड मिला है' । फिर मन को दिखाया कि एक निर्दोष के गले में १० अंगुल की गरम सीख ठोकी जारही है । ठोकनेवाले से पूछा कि क्या कारण है ? तो उसने कहा कि "इसने द्विजों का नाम आदर पूर्वक उच्चारण नहीं किया' । मन इन दृश्यों को देखकर मूर्छित होकर गिर गया । बड़ी मुश्किल से खून

के आंसू बहाता हुआ होश में आया तो मन ने कहा 'यह अनर्गलबातें मिथ्या विश्वास को धर्म से रोकना कहां से आगया' ? वेद तो सबको वेद पढ़ने का आदेश देता है :—

वैश्व देवीं वर्चस आरभध्वं शुद्धा अवन्त: शुचय: पावका: ।
अति क्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमा: सर्व वीरा भदेम ॥
॥ अथर्व: १२-२-२८ ॥

हे भद्र पुरुषों (वर्चस) वर्चस (तेज, दीप्ति, प्रकाश, ज्ञानादि) के लिये (विश्व देवी) विश्व देवों सब पदार्थों, सब उत्तम गुणों से सम्बन्ध रखने वाली वेद वाणी को (आ) सब प्रकार से (रभध्वं) वेग पूर्वक प्रारम्भ करो, या प्राप्त करो और (शुद्धा:) शुद्ध (भवन्त:) होते हुवे (शुचय:) ज्ञान प्रकाश से युक्त होकर (पावका:) दूसरों को पवित्र करनेवाले होकर (दुरिता) दु:ख प्राप्त कराने वाले (पदानि) पदों को साधनों को कार्यों को (अति क्रामन्त:) अत्यन्त लांघते हुवे तुम हम (सर्ववीरा:) सर्व वीर अर्थात सर्व पुकार के वीरों वाले (शत हिमा:) सौ सदिये सौ वर्ष (मदेम) सुखी रहे । इस वेद मन्त्र से सब मनुष्यों को वेद पढ़ कर दूसरों को पढ़ाने की आज्ञा भगवान ने दी है । वैदिक वर्ण व्यवस्था को जानने के लिये सृष्टयुत्पत्ति की ओर जाना होगा । जब सृष्टि उत्पन्न हुई तो भगवान ने आदि में जो-जो मनुष्य उत्पन्न किये जिनको हम सन्तान हैं वह कैसे थे वेद कहता है-

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वा वृधुः सौभगाय ।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुधा पृश्नि: सुदिना मरुद्भ्य: ॥
॥ ऋ-५-६०-५ ॥

सर्गारम्भ में उत्पन्न मनुष्य बड़ेपन से तथा छोटेपन से रहित

यह भाई होते हुवे कल्याण के लिये बढ़ते हैं । युवा अवस्था में श्रेष्ठ कर्मा यात्रियों को रुलाने वाला शक्तिमान प्रभु इनका पिता है । और उद्यमी पुरुष के लिये सुकाल स्थित करनेवाली प्रकृतियां पृथिक इन के लिये सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली होती हैं । इस वेद मन्त्र में बताया कि आदि सृष्टि में उत्पन्न होने वाले मनुष्य हर बात में समान होते हैं । अर्थात् इन में मनुष्यता की दृष्टि से कोई छोटा बड़ा नहीं होता । वर्तमान जन समुदाय सब उन्हीं की सन्तान है । परन्तु योग्यता की दृष्टि से जो भेद मालूम होता है, इस प्रश्न को वेद ने इस प्रकार हल किया पहले मन्त्र में प्रश्न है दूसरे में उत्तर है यथा

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधाव्यकल्पयत् ।
मुखं किम स्यासीत्कि बाहु किमूरु पादा उच्यते ।।

हे विद्वान लोगों जिस पूर्ण परमेश्वर को आप विविध प्रकार से धारण करते हो, उस ईश्वर की सृष्टि में मुख के समान श्रेष्ठ कौन है ? भुज बल को धारण करने वाला कौन है, घोंटू के कार्य करने हारे और पांव के समान कौन है ? इसका उत्तर जो वेद ने दिया वह ऋषि दयानन्द के शब्दों में सुनिये:- सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ४ "वर्ण व्यवस्था भी गुण कर्म स्वभाव के अनुसार होनी चाहिये (इस पर वादी प्रश्न करता है)

प्रश्न :— जिसके माता पिता अन्य वर्णस्थ हो, उनकी सन्तान कभी ब्राह्मण हो सकती है ?

स्वामीजी उत्तर देते है :- बहुत से होगये हैं, होते हैं और होंगे भी । जैसे छान्दोग्य उपनिषद ४-४ में जाबाल ऋषि अज्ञात कुल, महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रियवर्ण और

मातंड ऋषि चाण्डाल कुल से ब्राह्मण हो गये थे। अब भी जो उत्तम विद्या स्वभाव वाला है, वही ब्राह्मण के योग्य है और मूर्ख शूद्र के योग्य। स्वामीजी कहते हैं कि ब्राम्हन का शरीर मनु २-२८ के अनुसार रज वीर्य से नहीं होता (द्विज होने पर ब्राह्मण होता है। लेखक) यथा

स्वाध्यायेन जपैं होमैस्त्रैविद्यने ज्ययासुतैः।
महा यज्ञैश्च ब्राम्हीयं क्रियते तनुः ।। मनु २-२८ ।।

स्वाध्याय, जप, नाना विधि होम के अनुष्ठान, सम्पूर्ण वेदों को पढ़ने पढ़ाने, इष्टि आदि यज्ञों के करने, धर्म से सन्तानोत्पत्ति मंत्र महायज्ञ अग्निहोत्रादि यज्ञ, विद्वानों का संग, सत्कार, सत्य भाषण, परोपकारादि सत्कर्म, दुष्टाचार छोड़ श्रेष्टाचार में वर्तने से ब्राह्मण का शरीर किया जाता है। रज वीर्य से वर्ण व्यवस्था मानने वाले सोचें कि जिसका पिता श्रेष्ठ उसका पुत्र दुष्ट-और जिसका पुत्र श्रेष्ठ और उसका पिता दुष्ट तथा कहीं दोनों श्रेष्ठ व दोनों दुष्ट देखने में आते हैं--जो लोग गुण कर्म स्वभाव से वर्ण व्यवस्था न मान कर रज वीर्य से वर्ण व्यवस्था मानते हैं उनसे पूछना चाहिये, कि जो कोई अपने वर्ण को छोड़ नीच, अन्त्यज, अथवा कृश्चियन, मुसलमान होगया है उसको भी ब्राह्मण क्यों नहीं मानते ? इस पर यही कहेंगे कि उसने 'ब्राह्मण के कर्म छोड़ दिये इसलिये वह ब्राह्मण नहीं है' इससे यह भी सिद्ध होता है, कि जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वही ब्राह्मण और जो नीच भी उत्तम वर्ण के गुण कर्म स्वभाव वाला होवे, तो उसको भी उत्तम वर्ण में, और जो उत्तम वर्णस्थ हो के नीच काम करे तो उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिये। (आगे पहले जो वेद मन्त्र लिखा है— कि ब्राह्मण कौन है

उसका उत्तर जो वेद ने दिया है उसको स्वामीजी ने लिखा है :--

ब्राम्हणो ऽस्य मुख मासीद् बाहू राजन्य कृतः ।
उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यामृशूद्रोऽअजायत ।। य-३१-११ ।।

प्रतिवादी ने इसका अर्थ यह किया कि ब्राम्हण ईश्वर के मुखसे क्षत्रिय बाहूवेश्य उरु और शूद्र पांवसे उत्पन्न हुवे-इसकाउत्तर महर्षि दयानन्द जी यह देते हैं कि जो अर्थ तुमने किया है वह ठीक नहीं, क्योंकि यहां पुरुष अर्थात निराकार व्यापक परमात्मा की अनुवृति है। जब वह निराकार है तो उसके मुखादि अंग नहीं हो सकते, जो मुखादि अंग वाला हो वह पुरुष अर्थात् व्यापक नहीं हो सकता। और जो व्यापक नहीं वह सर्वशक्तिमान जगत का सृष्टा धर्ता, प्रलयकर्ता जीवों के पुण्य पापों को जान के व्यवस्था करने वाला, सर्वदा अजन्मा मृत्यु रहित आदि विशेषणवाला नहीं हो सकता। इसलिये इस (मन्त्र) का यह अर्थ है जो (अस्य) पूर्ण व्यापक परमात्मा की सृष्टि में मुख के सदृश्य सब में मुख्य उत्तम हो वह (ब्राह्मण) ब्राह्मण (बाहु) बाहूवें बलं शतपथ ५-४-१-१ बाहूर्वे वीर्यम् शतपथ ६-३-२-३५ बल वीर्य का नाम बाहु है वह जिससे अधिक हो सो (राजन्यः) क्षत्रिय (अरु) कटि के आधो भाग और जानु के उपस्थित भाग का उरु नाम है जो सब पदार्थों और सब देशों में उरु के भाग से जाके आके, प्रवेश करे वह (वेश्य) वैश्य और (पदभ्याम्) जो पग के अर्थात् नीचे अंग के सदृश्य मूर्खत्वादी गुण वाला हो वह शूद्र है। शतपथ में इस मन्त्र का ऐसा ही अर्थ किया है—जो लोग मुख से ब्राह्मण निकले ऐसा मानते हैं उनको कहना चाहिये कि जो-जो मुख से उत्पन्न हुवे थे उनकी संज्ञा ब्राह्मणादि हो, परन्तु तुम्हारी नहीं, क्योंकि जैसे और सब लोग गर्भाशय से उत्पन्न होते हैं वैसे तुम भी होते हो।तुम मुखादि

से उत्पन्न होकर ब्राम्हनादि संज्ञा का अभिमान करते हो—इसलिये तुम्हारा कहा अर्थ व्यर्थ है और हमारा ठीक है। वेद के दोनों मन्त्रों का अर्थ कर दिया गया। इन दोनों मन्त्रों से यह बात किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं होती है कि ब्राह्मण मुख से या क्षत्रिय भुजा से पैदा हुवे हैं इत्यादि। इतनी बात पर इनको जुदा-जुदा वर्ग या समुदाय बना लिया जावे। ब्राह्मण मुख है, क्षत्रीय भुजा है, वैश्य उरु है इसके कहने का यह प्रयोजन नहीं हो सकता है कि इस प्रकार के कार्य करनेवालों को एक जाति का रूप दे दिया जावे। संसार के सब देशों में चारों प्रकार के व्यक्ति में धर्म के सम्बन्ध में कर्मकाण्ड कराने वाले, युद्ध करने वाले, व्योपार करने वाले, सेवा करने वाले सब जगह हैं परन्तु बिना जाति और वर्ग बनाये उनका काम चलता है (२) लोक में देखने से यह ज्ञात होता है कि जाति वह है जिसकी आकृति एकजैसी हो, जिसका प्रसव एक जैसा है वह जाति होती है। दूसरे देश से आकर ईसाइयों ने, मुसलमानों ने ब्राह्मण बन कर हिन्दुओं को ईसाई और मुसलमान बना लिया और यहां के लोग पहचान न सके कि यह ब्राह्मण है या विधर्मी तो इन वर्गों की जाति माननेवाले कहां तक ठीक धारणा रखने वाले कहे जा सकते हैं। चौथे जैसा कि हम आगे लिखेंगे अनेक लोग ब्राह्मणों से पतित होकर शूद्र बन गये और अनेक अन्य लोग शूद्रादि से ब्राह्मण बन गये। बोहरा लोग नागर ब्राह्मण होते हुवे भी मुसलमान बन गये और बूचड़ (कसाई) लोग ब्राह्मण होते हुवे भी मुसलमान कसाई बन गये। यदि कोई ब्राह्मण जाति होती, तो जैसे गधे का घोड़ा, गऊ से बन्दर और बकरी से बिल्ली आदि नहीं बन सकते, वैसे ही ब्राह्मण से मलेच्छ, चाण्डाल, भवनादि न बन सकते। ऋषि दयानन्दजी ने मनु आदि के प्रमाण

देकर लिखा है कि—

शद्रो ब्राह्मण तामेति ब्राम्हणश्चैति शूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जातु मेवन्तु विद्याद्वैश्या तथैव च ॥
॥ मनु-१०-६५ ॥

सत्यार्थ प्रकाश स. ४

अर्थात् जो शूद्र कुल में उत्पन्न हो के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वेश्य गुण कर्म स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वेश्य हो जाये । वैसे ही जो ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य कुल में उत्पन्न हुवा हो और उसके गुण, कर्म, स्वभाव शूद्र के सदृश्य हों तो वह शूद्र हो जाये । वैसे क्षत्रिय वा वैश्य के कुल में उत्पन्न होकर ब्राह्मण ब्राह्मणी वा शूद्र के समान होने से ब्राम्हन वा शुद्र भी हो जाता है । अर्थात् चारों वर्णों में जिस-जिस वर्ण के सदृश्य जो-जो पुरुष व स्त्री हो वह वह उसी वर्ण में गिनी जावे (सत्यार्थ प्रकाश स. ४ हम आगे लिखेंगे)

फिर ऋषि दयानन्द ने आपस्तम्ब (धर्म) के २-५-१०१ सूत्र के प्रमाण से लिखा धर्माचरण से निकृष्ट वर्ण अपने से उत्तम २ वर्णों को प्राप्त होता है, और वह उसी वर्ण में गिना जावे, कि जिस २ के योग्य होवे । वसे ही अधर्माचरण से पूर्व-पूर्व अर्थात् उत्तम-उत्तम वर्ण वाला मनुष्य अपने से नीचे-नीचे वाले वर्णों को प्राप्त होता है, और उसी वर्ण में गिना जावे । इसके लिये बहुत ही उदाहरण हैं । इससे पहले कि हम उन प्रमाणों को लिखें यह जान लेना आवश्यक है कि जन्म से कोई मनुष्य न ब्राम्हण होता है न वैश्य न क्षत्रिय । मूर्ख होनेसे उसको शूद्र कहाजा सकता है । तव यह

तब निश्चित है कि जब तक बच्चे को कोई शिक्षा न दी जावे तब तक उसका किसी बात का जानना तो एक ओर रहा वह बोल तक भी नहीं सकता। इस बात को जानने के लिये अकबर बादशाह और अन्य भी कई शासकों ने बच्चों को एकान्त स्थान पर जुदा रख कर देखा और यह आज्ञा होती थी कि भोजन देने वाला, दूध पिलाने-वाली उनको दूध पिलाते व भोजन खिलाते समय उससे बोलें नहीं। जब वह लड़के बड़े हुवे तो केवल इतनी आवाज बोलते थे--जितनी कि दरवाजा को खोलने और भेडने में आती थी। शोलापुर में एक लड़का सत्याग्रह कार्यालय में लाया गया। कहते थे कि उसे भेड़िये की खोह से लाये थे वह वैसी ही भेड़िये . जैसी बोली बोलता था, और वैसे ही दो पाँव और दोनों हाथों को टेककर चलता था, सीधा वह खड़ा होकर नहीं चल सकता था। ऐसे पुष्ट प्रमाण होने पर भी अभी तक यह पौराणिक जगत जन्मजात की दुहाई देते ही चला जाता है, पाठक महानुभाव जन्म मात्र से किसी बच्चे का कुछ जानना तो एक ओर रहा वह'क'तक भी नहीं बोल सकता, तो फिर जन्म से ब्राम्हण होता है इसकी सत्यता कैसे प्रमाणित हो सकती है- इसी वास्ते कुछ लोगों का कहना है कि जन्म से तो प्रत्येक मनुष्य ज्ञान रहित होता है अर्थात शूद्रवत होता है जैसे—

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारो द्विज उच्यते।
वेद पाठी भवेद् विप्रः ब्रह्म जानेती ब्राह्मणः ॥

॥ नरसिंह तापनी उपनिषद् ॥

अर्थात जन्म से शूद्र ही सब होते हैं, संस्कारों से द्विज होते हैं। वेद पढ़कर विप्र होते हैं और ब्रह्म ज्ञान से ब्राह्मण होते हैं। ठीक

श्री कबीरजी ने ऐसा ही कहा है "जेतू ब्राह्मण ब्राह्मणी जायान्ते आनवार से कोई नहीं आया सो वह ब्राम्हण इत्यादि हमारे तुम कित ब्राह्मण हम कित सूद, हम कित लोहू हम कित दूध—कहत कबीर जो ब्रह्म विचारे" । यह बात स्वतः सिद्ध है जैसाकि हम लिख आये हैं कि जन्म होने के समय से ही बच्चे को जुदा रख देने पर वह बोल भी नहीं सकता तो फिर ऐसी अवस्था में जन्म के आधार पर उसको ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य कौन कहेगा । अतः ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् जैसे उसके गुण, कर्म, स्वभाव होंग उसके अनुसार उसकी संज्ञा होगी । यदि ऐसा न करके उल्टा किया जावे कि वैश्य के गुण रखने वाले को तो क्षत्रिय बना दिया जावे और ब्राह्मण के गुण रखने वाले को वैश्य । तो बताइयेकि उन कार्यों में सफलता कभी प्राप्त हो सकती है ? वह दोनों ही असफल रहेंगे यह तो ऐसी ही मिसाल होगी कि चपरासी की योग्यता रखने वाले को तो कलेक्टर बना दिया जावे और कलेक्टरकी योग्यता रखने वाले को चपरासी । तो बताइये कैसा खूब न्याय होगा ? ऐसा ही भारत देशमें हुवा । जन्मजात मानकर एक मूर्ख निरक्षर भट्टाचार्य को ब्राम्हण बनाकर मुखिया बना दिया तो फिर भारत का बेड़ा गरक होने में कोई कसर रह सकती थी ? सो वही हुवा । अस्तु मैं कह रहा था कि विद्या प्राप्त करने के पश्चात् ब्राम्हणादि की उपाधि मिलती थी । वेद ने कहा है—

द्विजन्मानो य ऋत सापः—सत्य स्वर्वन्तो यजता अग्नि जिव्हा ।
॥ ऋग वेद ६-५०-२ ॥

अर्थात द्वि जन्मा होने के लिये नियमबद्धता, सत्यता, सुखमय, यज्ञशील और तेजस्वी वर्णों वाला होना आवश्यक है । ऐसा बनकर ही प्रत्येक व्यक्ति आश्रम और वर्ण की दुनिया में प्रविष्ट होकर

सफल मनोरथ हुवा करता है। पहले वेद मन्त्र द्वारा लिखा जा चुका है कि सृष्टि के आदि में उत्पन्न होने वाले मनुष्य एक समान थे, उस समय उनका कौनसा वर्ण था इस पर देखो बृहदारण्यक उपनिषद प्रथम अध्याय ११-१८-१३

ब्रह्म वा इदमासीदेक मेव तदेकं सन्नव्यमतत् । तच्छ्रेयो रूप
मृत्यु सृजत् क्षत्रं यान्येतानी देवत्रा क्षत्राणिन्दो वरुणः सोमो
रुद्रः पर्जन्य यमो मृत्यूरी शान् ॥ इति ॥ (११)

अर्थात् सृष्टि के आरम्भ में एक ब्राह्मण वर्ण ही था, वह एक होने के कारण लौकिक व्यवहार की सिद्धी में समर्थ न हो सका, इसलिये उसने एक उत्तम वर्ण क्षत्रिय को बनाया देवों में यह क्षत्रिय है। इन्द्र, वरुण, सोमादि-फिर भी-लौकिक व्यवहार की सिद्धि में समर्थ न हुवे तो वैश्य वर्ण को बनाया। फिर भी लोक व्यवहार न चला तो—

सनैव व्यमवत्स शौद्र वर्णमसृजत ।

जो शूद्र को बनाया। उपनिषद में यह कहा गया है, कि सृष्टि के आरम्भ में केवल एक ब्राम्हण वर्ण ही था। अतः उस एक से लौकिक व्यवहार की सिद्धि न हो सकी तो प्रबन्धादि कार्यों को क्रियात्मक रूप में लाने के लिये अपने में से क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णों को बनाया। आदि में एक ही वर्ण था इस बात का समर्थन महाभारत ने भी किया है। जैसे महाभारत शान्ति पर्व अध्याय १८८

एक वर्णमिदं पूर्व विश्व मासीद युधिष्टिर ।
क्रम क्रिया भेदेन चातुर्वर्ण्य प्रतिष्ठितम् ॥

अर्थात् सृष्टि के आदि में एक ही वर्ण था। कर्म और क्रिया के विभाग से चार वर्ण प्रतिष्ठित हुये। फिर महाभारत में कहा उसी अध्याय में—

एक एव पुरावेद: प्रणव: सर्व कांड मथ: ।
देवो नारायणो नान्या एकोऽग्नी वर्ण एव च ॥
॥ भागवत ९-१४-४८ ॥

सृष्टि के आदि में एक ब्राम्हण वर्ण था। फिर क्रिया कर्म के विभाग से चार वर्ण हो गये। जब ब्राम्हण वर्ण से चार वर्ण हुये तो स्पष्ट है कि जिस प्रकार ब्राम्हण वर्ण से चार हुये वह चारों फिर भी ब्राम्हण हो सकते हैं। इसमें कोई संशय नहींहो सकता। फिर वेद ने जो इन चारों वर्णों का प्रतिपादन किया है उसमें भी कोई छोटा बड़ा नहीं है। यजुर्वेद अ. ३० मन्त्र ५ इस प्रकार है—

ब्रम्हणे ब्राम्हणं क्षत्राय राजन्यं मरुद्भ्यो वैश्यं तप से शूद्रं ।
। इत्यादि ।

प्रभू से प्रार्थना की गई है कि "हे प्रभू आप इस जगत में वेद के ज्ञान के प्रचार के लिये ब्राम्हण को, राज्य व राज्य की रक्षा के लिये क्षत्रिय को, पशु आदि प्रजा के लिये वैश्य को, तप से उत्पन्न होने वाले श्रमजीवी शूद्रको उत्पन्न कीजिये"। शूद्रका पद तप है जिसका दामन तप के साथ बंधा है, सेवा के साथ बंधा है वह कितना महान होगा, कितना कर्मठ होगा, कितना निष्कामभावी होगा यह स्वत: सिद्ध है। रामायण में भी यही कहा है कि एक ही वर्ण आदि में था-

अमरेन्द्र मया बुद्धया प्रजा सृपृस्तथा प्रभो: ।
एक वर्ण समाभाषां एक रुपश्च सर्वश: ॥ उत्तर कांड ॥

अर्थात् जब भगवान ने सृष्टि को उत्पन्न किया तो उस समय एक ही वर्ण एक ही भाषा और एक ही जैसा रूप था। अब भी शूद्र और ब्राम्हण की आकृति अङ्गों तथा प्रति अङ्गों, बाहरके गात्रों और भीतर के सब कारणों में कोई भेद नजर नहीं आता। केवल यदि कोई अन्तर है तो वह कुछ मनुष्यों के हृदय में अभिमान युक्त ऊंच-नीच की मिथ्या, निराधार और अतात्विक दुर्भावना है। महाभारत शांति पर्व अध्याय १८८ में अत्यन्त स्पष्ट लिखा है—

इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता विप्रा वर्णान्तर गताः।
धर्मो यतः क्रिया तेषां नित्यंन प्रतिषिध्यते ॥ १४ ॥

इत्येते चतुरो वर्णा येषां ब्राम्हणो सरस्वती।
विहिता ब्रम्हणा पूर्व लोभाच्या ज्ञानतां गता ॥ १५ ॥

म. भा. शा. अ. १८८

अर्थात् ब्राम्हण ही भिन्न भिन्न कार्यों के कारण दूसरे वर्णों में गये। इन चारों वर्णों में से किसीके लिये भी धर्म और यज्ञादि करने का किसी समय निषेध नहीं था, ईश्वरीय वेद वाणी आरम्भ से चारों वर्णों के लिये समान रूप से ही दी गई थी, परन्तु लोभ वशात् लोग अज्ञान में फसते चले गये (अर्थात वेद से वंचित होगये)। धर्म के सच्चे प्रचारक विश्व सुधारक महर्षि दयानन्द के मार्मिक शब्द और प्रमाण इस विषय में सुनिये (सत्यार्थ प्रकाश तीसरा समुल्लास) (१४६ "आज कल के सम्प्रदायी और स्वार्थी ब्राम्हणादि जो दूसरों को विद्या सत्संग से हटाकर और अपने जाल में फंसा के उनका तन-मन-धन नष्ट कर देते हैं और चाहते हैं कि जो क्षत्रिय वर्ण पढ़कर विद्वान हो जायेंगे तो हमारे पाखण्ड जाल से छूट और हमारे छल

को जानकर हमारा अपमान करेंगे इत्यादि विघ्नों को राजा और प्रजा दूर करके अपने लड़के और लड़कियों को विद्वान करने के लिये तन, मन,धनसे प्रयत्न किया करें'। आगे एक साम्प्रदायिक रूपधारी कहता है कि "क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़े ? जो यह पढ़ेंगे तो हम फिर क्या करेंगे और इनके पढ़ाने में प्रमाण भी नहीं है मगर यह निषेध है—स्त्री शूद्रो नाधीयता मिति श्रुते। अर्थात् स्त्री और शूद्र न पढ़ें यह श्रुति है। महर्षि दयानन्द इसका उत्तर देते हैं (उत्तर) सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्यमात्र को पढ़ने का अधिकार है"। तुम कुआं में पड़ो और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुई है। किसी प्रमाणिक ग्रन्थ की नहीं। और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने, सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के २६ वें अध्याय में दूसरा मन्त्र है १४८—

यथेमां वाचं कल्याणी मा वदानि जनेभ्य: ब्रम्ह राजन्याभ्यां
शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।

परमेश्वर कहता है कि (यथा) जैसे मैं (जनेभ्य:) सब मनुष्यों के लिये (इमाम्) इस (कल्याणीम्) कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देने हारी (वाचम्) ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का (आवदानि) उपदेश करता हूं, वैसे तुम भी किया करो।

(१४९) यहां कोई ऐसा प्रश्न करे कि जन शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिये क्योंकि स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य ही को वेदों के पढ़नेका अधिकार लिखा है। स्त्री और शूद्रादि वर्णों का नहीं (उत्तर। ब्रम्ह राजन्याभ्याम्) इत्यादि देखो परमेश्वर स्वयं कहता है कि "हमने ब्राम्हण, क्षत्रिय (आचार्य) वैश्य

(शूद्राय) शूद्र और (स्वाय) अपने भृत्यबा स्त्रयादि (अरणाय) और अति शूद्रादि के लिये भी वेदों का प्रकाश किया है। अर्थात् सब मनुष्य वेदों को पढ़-पढ़ा और सुन-सुना कर विज्ञान को बढ़ा के अच्छी बातों को ग्रहण और बुरी बातों को त्याग करके दुखों से छूट कर आनन्द को प्राप्त हों। कहिये अब तुम्हारी बात माने या परमेश्वर को? क्या परमेश्वर शूद्रोंका भला करना नहीं चाहता? क्या ईश्वर पक्षपाती है कि वेदों के पढ़ने-सुनने का शूद्रों के लिये निषेध और द्विजों के लिये विधि करे? जो परमेश्वर का अभिप्राय शूद्र आदि के पढ़ाने, सुनाने का न होता, तो उनके शरीर में वाक् और श्रोत्र इन्द्रिय क्यों रचता? जैसे परमात्मा ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायू चन्द्र सूर्य और अन्नादि पदार्थ सब के लिये बनाये हैं वैसे ही वेद भी सबके लिये प्रकाशित किये हैं। और जहां कहीं निषेध किया है उसका यह अभिप्राय है कि जिसको पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निर्बुद्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहाता है। परन्तु शूद्र के बच्चों को विद्या से वञ्चित रखना ऋषि दयानन्दने उचित न जानकर उन्हें भी विद्याभ्यास के लिये गुरुकुल में भेज देने का आदेश दिया (द्वितीय समुल्लास) यज्ञ में सम्मिलित होने का अधिकार सबको है।

पंच जना मम होत्रं जुषन्तां गो जाता उतमेऽमत्तिमास
पृथिवीन: पार्थिवात्पात्वं हसोऽन्तरिक्षं दिव्या त्पत्वस्मान्
॥ ऋ. १०-५३-५ ॥

इस वेद मन्त्र में यजमान कहता है कि ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और निषाद पांचों प्रकार के मनुष्य मेरे यज्ञ को करें।

वेद में शूद्र के लिये भी तेज की प्रार्थना:—

रुचं वो धेहि ब्राम्हणेषु रुचं राजसु नस्कृधि ।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ॥
॥ यजु. १८-४८ ॥

इस मन्त्र में ब्राम्हणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों को समान रूप से तेज प्रदान करने की प्रार्थना की गई है। इसलिये कि वेद का शूद्र चारों वर्णों का एक भाग होने पर आर्य हैं। अत: उसके तेजस्वी होने के लिये प्रार्थना की गई है। यदि अनार्य होता तो उसके नाश के लिये प्रार्थना की जाती। यमों के पालन करने का अधिकार चारों वर्णों का है।

अहिन्सा सत्य मस्तेयं शौच मिन्द्रिय निग्रह: ।
एते समासिकं धर्मं चातुर्वर्णोऽब्रवीन्मनु: ॥

हिंसा न करना, सत्य बोलना, दूसरों का धन अन्याय से न लेना, पवित्र रहना, इन्द्रियों का निग्रह करना आदि ये चारों वर्णों के समान धर्म हैं। शूद्र को वेद का उपदेश देना चाहिये।

शूद्र का पंच यज्ञ करने का अधिकार :—

पंच यज्ञ विधानान्तु शूद्र स्यापि विधीयते ।
तस्य प्रोतणे नमस्कार: कुर्वन नित्यं विधीयते ॥
॥ वि. स्मृ. १-९ ॥

ब्रम्ह यज्ञ (सन्ध्या वेद पाठ) पितृ यज्ञ, देव यज्ञ (इत्यादि)

अतिथि यज्ञ आदि पांचों यज्ञों के करने का शूद्रों को भी विधान है।

कृत युग में चारों वर्णों का आचार एक समान :-

ब्राम्हणाः क्षत्रियाः वैश्या शूद्राश्च कृत लक्षणाः ।
कृते युगे सम्भवत स्वकर्म निरता प्रजा ॥ (१८)
समाश्रमं समाचारं समज्ञानं च केवलम्
तदा ही सम कर्माणो वर्णो धर्मान् वासूनवन (१९)
एक देव समा युक्ता एक मन्त्र विधि क्रिया
प्रथग्धर्मा स्त्वेक वेदा धर्म मनु व्रताः । म. का.
बा. अ. १४९

कृत युग में ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों वर्णों का आश्रम आचार और कर्म एक समान था । सब एक ही ईश्वर के उपासक थे। सब वैदिक मन्त्रों से संस्कारादि करते थे, उनके वर्ण, धर्म भिन्न-भिन्न होने पर भी वह सब एक ही वैदिक धर्म को मानने वाले थे ।

चत्वारो वर्णा यज्ञ मिम वहान्ती / महा. व. १३४-११

नील कण्ठ टीकाकार इसका अर्थ इस प्रकार किया है कि न केवल यज्ञ किन्तु ज्ञान यज्ञ में भी शूद्र का अधिकार है ।

शूद्र का उपनयन संस्कार

शूद्राणाम दुष्ट कर्मणा मुपनयम गृ. सूत्र हरीहर भाष्य को-२

दुष्ट काम न करने वालों शूद्रों का उपनयन संस्कार करना चाहिये ।

यज्ञ करने का सबको अधिकार :-

विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भ आरोदसी अप्रणाज्जायमानः ।
वीलुचिदद्रिम भिनत्परायन जना यदग्नि मयजन्त पञ्च ॥

ऋ. १०-४५-६

(विश्वस्य) समस्त संस्कार का (केतुः) प्रकाशने वाला (भुवनस्य) भवनों के--ब्रम्हाण्डस्थ सब पदार्थों के (गर्भः) भीतर वर्तमान अग्नी, इस समय (जायमानः) यज्ञ द्वारा उत्पन्न हुवा (रोदसी) द्यौ और पृथ्वी दोनों को (आ) भली प्रकार सब ओर से (अप्रणात्) भर देता है, तृप्त कर देता है वह (परायण) दूर तक जाता हुवा (वीलु) बलवान (अद्रि) मेघ को (चित्) भी (अभिनत्) छिन्न-भिन्न कर देता है, (यत) जब (पंच जना) पांच जन ब्राम्हण, क्षत्रिय वैश्य, शूद्र तथा निषाद (अग्नि) अग्नि का (अयजन्त) भजन करते हैं। पञ्च जनाः शब्द का अर्थ निरुक्तार 'चत्वारो वर्णों निषाद पंचमो' करते हैं।

वेद पंच जन कर्तृक अग्नि भाग का विधान कर रहा है। इससे स्पष्ट और क्या हो सकता है ? शूद्रों से यज्ञाधिकार छीनने वाले इस वेदाज्ञा का मनन करें।

आदौ कृत युगे वर्णा नृणां हंस इति स्मृताः ।
कृत कृत्याः प्रजा जात्या तस्मात् कृत युगं विदुः ॥१०॥

भागवत स्कंध ११-अ. १७ पृ. ८-९ गीता प्रेस

जिस समय इस कल्प का प्रारम्भ हुआ था और पहिला सत्युग चल रहा था, उस समय सभी मनुष्यों का 'हंस' नामक एक ही वर्ण था। उस युग में सब लोग जन्म से ही कृत कृत्य होते थे।

चारों वर्ण ब्रह्माजी ने यज्ञ के लिए ही उत्पन्न किये

यज्ञ निष्पत्तये सर्व मेतद् ब्रम्हा च कार वै ।
चातुर्वंर्ण्यं महाभाग यज्ञ साधन मुत्तमम् ॥ (७)

विष्णु पु. प्रथम अंश अ.-६-पृ

हे महाभाग ! ब्रम्हाजी ने यज्ञानुष्ठान के लिए ही यज्ञ के उत्तम साधन रूप इस सम्पूर्ण चातुर्वर्ण्य की रचना की थी।

पहिले एक ही वर्ण था

श्री कुंवर चांदकरणजी शारदा ने अपनी पुस्तक 'शुद्धि' में ब्रम्ह पुराण के प्रमाण से अध्याय २२३ के कुछ श्लोक लिखे हैं, जो निम्न हैं :—

शूद्रोऽप्यागम् सम्पन्नो द्विजो भवति संस्कृतः ।
ब्राम्हणो वा ऽप्यसद वृतः सर्व संकर भोजनः ॥५३॥
स ब्राम्हण्यं समुत्सृज शूद्रो भवति तादृशः ॥५४॥
न योनिर्नाऽपि संस्कारो न श्रुतिर्नाऽपि सन्ततिः ॥५६॥
कारणानि द्विजत्वस्य वृत्त मेवतु कारणम् ॥५७॥
वृत्ते स्थितश्च शूद्रोऽपि ब्राम्हणत्वं च गच्छति ॥ब्रम्ह पुराण॥

अर्थात्–शुभ संस्कार तथा वेदाध्ययन युक्त शूद्र भी ब्राम्हण हो जाता है। और दुराचारी ब्राम्हण ब्राम्हणत्व को छोड़कर शूद्र हो जाता है। जन्म, संस्कार, वेद, सन्तान यह सब द्विज बनाने के कारण नहीं हैं। प्रत्युत आचार ही मनुष्य को ब्राम्हण बना देता है। शुद्धाचार युक्त शूद्र भी ब्राम्हण बन जाता है। वृत्ति ही ब्राम्हण बनने का कारण है।

वर्ण जन्म से नहीं होता

हम पहिले लिख चुके हैं--कि यदि वर्ण जन्म पर निर्भर होता तो एक मां के कई बच्चों को अलग रक्खा जाये--ऐसे स्थान पर जहां शब्द भी उनके कान में न जावे--तो उन लड़कों का ब्राम्हण, क्षत्रिय

वैश्य होना तो एक ओर रहा, वह बोल भी न सकेंगे । दूसरे धर्म परिवर्तन से वर्ण क्यों खत्म हो जाता है ? पहिले जो एक ब्राम्हण था उसके कसाई हो जाने पर उसका ब्राम्हणत्व कहां जाता है ? तीसरे कन्या का गोत्र विवाह समय कैसे परिवर्तित हो जाता है ? आगे प्रमाण देखिये—

न योनिर्नापि संस्कारो न श्रुतं न च सन्ततिः ।
कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेवतु कारणम् ॥ ५० ॥

वृत्तेस्थितस्तु शूद्रोऽपि ब्राम्हणत्वं गच्छति ॥
(५१-महा-भा. अनु. पर्व अ. १४३)

अर्थात् ब्राम्हणी के गर्भ से उत्पन्न होना, संस्कार, वेद श्रवण ब्राम्हण पिता की सन्तान होना यह ब्राम्हणत्व के कारण नहीं है, बल्कि सदाचार से ही मनुष्य ब्राम्हण बनता है ।

जैसे—वेदाश्च त्यागश्च, यज्ञाश्च नियमांश्च तपांसिच
न विप्र दुष्ट भावस्य सिद्धि गच्छति कर्हिचित् ।

वेद पढ़ने, यज्ञ करने, त्याग करने, नियमों का पालन करने, तप करने से भी दुष्ट भाव रखने वाला विप्र सिद्धि को प्राप्त नहीं होता।

न कुले न जात्या वा क्रियाभि ब्राम्हणो भवेत् ।
चाण्डालोऽपिहि वृत्तस्थो ब्राम्हणाः सयुधिष्ठिर ॥
महा-भा-अनु. पर्व अ-२२६-१५

कोई मनुष्य कुल, जाति और क्रिया के कारण ब्राम्हण नहीं हो सकता। यदि चाण्डाल भी सदाचारी हो वह ब्राम्हण होता है। "कर्मों अपनो अपनी क्या नेड़े क्या दूर" यथा-कर्म प्रधान विश्व रच राखा। जो जस कीन तासु फल चाखा।

महाभारत के प्रमाण से हम इसी आशय के श्लोक पहिले लिख चुके हैं। इसी आशय के श्लोक भविष्य पुराण में भी आये हैं। उसमें बहुत से नाम गिनाये हैं, जो आचार से ब्राम्हणत्व को प्राप्त हो गये :—

आचार मनु तिष्ठं तो व्यासादि मुनि सत्तमाः।
गर्भाधानादि संस्कार कलाप रहिताः स्फुटम् ॥२०॥
विप्रोत्तमाः श्रियं प्राप्ताः सर्वलोक नमस्कृताः।
बहवः कथ्य माना ये कति चित्तान्नि बोधत ॥२१॥

जातो व्यासस्तु कैवर्त्याः श्वपाकयाश्च पराशरः।
शुक्याः शुकः कणादाख्यस्तथो लूक्याः सुतो भवत् ॥२२॥
मृगी जो थर्षश्रृंगोपि, वशिष्ठो गणिकात्मजः।
मंद पालो मुनि श्रेष्ठो नाविका पत्य मुच्यते ॥२३॥
मांडव्यो मुनि राजस्तु मंडूकी गर्भ संभवः।
बहवोन्येऽपि विप्रत्वं प्राप्ता ये पूर्व वद्विजाः ॥२४॥
यच्चैतच्चारु चरितं रच्यं मुच्चरितं वचः ॥
तद्विचार्या चरन्नुच्चै राचारो पचि तद्युतिः ॥२५॥

भविष्य, पुरा. ब्राम्ह पर्व अध्या॰ ४२ श्लोक २० से

मूल संस्कृत—

अर्थात् आचार से ही व्यास आदि मुनि उत्तम हो गए, जो गर्भाधानादि संस्कारों से रहित थे। वह विप्रत्व को तथा प्रतिष्ठा को प्राप्त हो सब लोकों के पूज्य बन गए। अन्य भी बहुत से उत्तम प्रतिष्ठा को प्राप्त हो गए। मुनि व्यास कैवर्ती से, पाराशर श्वपाकी से, शुक्या से शुक, कणाद उलूक्या सुत हुए। शृंगी मृगी से, वशिष्ठ गणिका से मन्द पाल मुनि नाविका से, मंडूकी से ऋषि माण्डव्य हुए। अर्थात् बहुत से ऐसे विप्रत्व को प्राप्त हुए। आगे फिर लिखा—

हरिणी गर्भ संभूतः ऋष्य शृंगो महा मुनिः।
तपसा ब्राम्हणो जातः संस्कारस्तेन कारणम् ॥२६॥

श्वपाकी गर्भ संभूतः पिता व्यासस्य पार्थिव।
तपसा ब्राम्हणो जातः संस्कारस्तेन न कारणम्। २७॥

उलूकी गर्भ संभूतः कणादाख्यो महामुनिः॥
तपसा ब्राम्हणो जातः संस्कारस्तेन कारणम् ॥२८॥

गणिका गर्भ संभूतो वशिष्ठश्च महामुनिः।
तपसा ब्राम्हणो जातः संस्कारस्तेन कारणम् ॥२९॥

नाविका गर्भ संभूतो मंदपालो महामुनिः।
तपसा ब्राम्हणो जातः संस्कारस्ते न कारणम् ॥३०॥

भवि. पु. ब्राम्ह पर्व अ. ४३

यह सब लोग महामुनि तप से ब्राम्हण हुए, संस्कार कारण नहीं। हरिणी के गर्भ से महामुनि शृंगी, श्वापाकी के गर्भ से पाराशर, उलूकी के गर्भ से कणाद, गणिका (वेश्या) के गर्भ से वशिष्ठ, आदि तप से ब्राम्हण हुए।

इसी से मिलता-जुलता पाठ बज्र सूच्योपनिषद में है। यथा

जाति ब्राम्हण इति चेत् तर्हि अन्य जातौ समुद्भवा वहबो महर्षय: सन्ति ।।
ऋष्य श्रृंगो मृग्य: जात: कौशिक: कुशस्त्वात् गौतम: शशपृष्ठे, बाल्मीकि: वल्मीक्यां व्यास: कैवर्त कन्यायां पराशर चाण्डाली गर्भोत्पन्न: वशिष्ठा वेश्यायां विश्वामित्र: क्षत्रियायां अगस्त्य: कलसाज्जात: माण्डव्यो मांडूकि गर्भोत्पन्न: मातंगो मातंगी पुत्र: अनुचरो हस्तिनी गर्भोत्पन्न: भरद्वाज: शूद्री गर्भोत्पन्न: नारदो दासी पुत्र: इति श्रूयते पुराणे तेषां जाति विनापि सम्यग् ज्ञान (विशेषाद) ब्राम्ह मत्यंत्य स्वीक्रियते: तस्माज्जाज्जात्या ब्रम्हणेन भवत्येव ।।

बज्र सूच्युपनिषद—

अर्थात् जाति (जन्म) से ब्राम्हण नहीं होता । क्योंकि अनेक इतर जातियों में उत्पन्न होकर ब्राम्हणत्व को प्राप्त हो गए। यथा ऋषि श्रृंगी मृग्या से, कौशिक कुश जाति से, गौतम शशक जाति की स्त्री की पीठ से, बाल्मीकि वल्मीक (दीमक) से, व्यास केवट कन्या से, पराशर चाण्डाली से, वशिष्ठ वेश्या से, विश्वामित्र क्षत्रिया से, अगस्त कलश से, मांडव्य मांडूकी से, मातंग मातंगी से. भरद्वाज शूद्रा से तथा नारद दासी से उत्पन्न हुए। ऐसा पुराणों से सुना जाता है। इन महर्षियों का ब्राम्हणत्व जाति के बिना भी उत्तम

ज्ञान से स्वीकृत हो गया। अतः जन्म ब्राम्हणत्व के लिये कारण नहीं।

धृष्ट के धार्ष्ट नामक क्षत्रिय हुए। अन्त में वे शरीर से ही ब्राम्हण बन गये ॥१७॥

अय्यारुणेस्सत्यव्रतः योऽसौत्रिशंकु संज्ञामवाप ॥२१॥

च चाण्डाल तामुपगतश्च ॥२२॥

श्री विष्णु पुराण (अ. ३ चतुर्थ अंश)

अय्यारुणि के सत्यव्रत नामक पुत्र हुआ जो पीछे त्रिशंकु कहलाया ॥२१॥

वह त्रिशंकु चाण्डाल हो गया था ॥२२॥

त्रिशङ्कोर्हरिश्चन्द्रस्त स्माच्च ॥२५॥
विष्णु पुराण (अ. ३ चतुर्थ अंश)

त्रिशंकु से हरिश्चन्द्र हुआ।

वीतहव्य ब्राह्मण बने :-

एवं विप्रत्वमगमद् वीतहव्यो नराधिपः।
भृगो प्रसादाद् राजेन्द्र क्षत्रियः क्षत्रियर्षभ ॥६६॥

श्री महाभारत [अनुशासन पर्वणि दानधर्म पर्व]
(अध्याय ३० वां)

राजेन्द्र ! क्षत्रिय शिरोमणि ! इस प्रकार राजा वीतहव्य क्षत्रिय होकर भी भृगु के प्रसाद से ब्राम्हण होगये ।।६६।।

पाठक वृन्द ! हमने ऊपर संक्षेप से वर्ण धर्म के विषय में लिखा । पुराणों और अन्य ऐतिहासिक ग्रन्थों में और भी बहुत से प्रमाण मिलते हैं । किन्तु विस्तार भय से हम उनको लिखने से विवश हैं । हमें तो आश्चर्य इस बात का है कि सर्वंखल्विदं ब्रम्ह का नारा लगाने वाली जाति कैसे छूत-छात के चक्र में पड़ गई ।

यस्तु, सर्वाणि भूतान्यात्मन्ये वानु पश्यति ।
सर्व भूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ।। ईश. ।।

तथा--विद्या बिनय सम्पन्ने ब्राम्हणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैवश्वपाके च पंडिता समदर्शिनः ।। ईश. ।।

तथा--किरात--हूणान्ध्र--पुलिन्द--पुलकसाः ।
आभीर--कङ्का यवनाः खशादयः ।।

येऽन्ये च पापा यदु पाश्रया श्रयाः ।
शुद्धयन्ति तस्मै प्रभविष्णवे नमः ।। (भागवत)

श्वपच, शवर, खश, यवन जड़, पामर कोल किरात ।
राम कहत पावन परम, होत भुवन विख्यात ।।
(तुलसी जी)

गुह भरतजी से कहते हैं--
कपटी, कायर, कुमति कुजाती, लोक वेद बाहर सब भांती ।
राम कीन्ह आपन जबही ते, भयेऊ भुवन भूषण तबही ते ।
(तुलसी जी)

उत्तरकांड

पाई न गति केहि पतित पावन राम भज सुन सठ मना।
गणिका, अजामिल, गृद्ध, व्याध, गजादि मिल तारेउ घना ।।
आभीर, यवन, किरात, खस, श्वपचादि अति अघ रूप जे।
कहि नाम वारेक तेपि पावन होत राम नमामिते ।।
(तुलसीजी)

गङ्गा गंगेति यैर्नाम योजनानां शतै रपि।
स्थितै रुच्चारितं हन्ति पापं जन्म त्रयार्जितम् ।।
(विष्णु पुराण)

दृष्ट्वा जन्म शतं पापं पीत्वा जन्म शतद्वयम्।
स्नात्वा जन्म सहस्राणि हन्ति गङ्गा कलौ युगे ।।

जो लोग यह मानते हैं

उनका छूत-छात के फन्दे में पड़ना विस्मय जनक है। इस पुस्तिका में मैंने लिखा कि प्रथम एक ब्राह्मण वंश ही था। उसी से शूद्र हुए। और फिर कई प्रमाण दिये कि शूद्र से ब्राह्मण और ब्राह्मण से शूद्र होते रहे। एक-एक पुरुष चारों वर्णों में हुए:—

'गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्य प्रवर्तयिताऽभूत। वि. पु. तथा--
पुत्रोगृत्समदस्य च शुनको यस्य शौनकः।
ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैव च ।।
एतस्य वंशो संभूता विचित्रा कर्म्मभिर्द्विजाः ।।वायु-पु.।।

पुत्रो गृत्समदस्यापि शुनको यस्य शौनकः ।
ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः पुत्रास्तथैव च ।।हरिवंश।।

ऊपर लिखित विष्णु, वायु और हरिवंश पुराण सब ही कहते हैं कि शौनकके पुत्र ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तथा शूद्र चारों वर्णों के हुए ।

अभोज्यान्नानि चाश्नाति स द्विजत्वात् पतेत् वै (२२)
।। महा. अनुशासन पर्व दान-धर्म अ. १४३-श्लो.२२ ।।

जो शुभ एवं दुर्लभ ब्राह्मणत्व को पाकर उसकी अवहेलना करता है, और नहीं खाने योग्य अन्न खाता है वह निश्चय ही ब्राह्मणत्व से गिर जाता है ।

सदाचारी शूद्र भी ब्राह्मण की भांति सेव्य है

कर्मभिः शुचिभिर्देवि शुद्धात्मा विजितेन्द्रियः ।
शूद्रोऽपि द्विजवत् सेव्य इति ब्रह्मा ब्रवीत्स्वयं ।। (४८)
।। महा. दान-धर्म अ. १४३/४८ ।।

देवि ! शूद्र भी यदि जितेन्द्रिय होकर पवित्र कर्मों के अनुष्ठान से अपने अन्तःकरण को शुद्ध बना लेता है, वह द्विज (ब्राह्मण) की भांति सेव्य होता है । यह साक्षात् ब्रह्माजी का कथन है । तथा
एभिस्तु कर्मभिर्देवि शुभैराचरितैस्तथा ।

शूद्रो ब्राह्मणतां याति वैश्यः क्षत्रियतां व्रजेत् ।। २६ ।।
।। महा. दान-धर्म अ. १४३/२६ ।।

देवि ! इन्हीं शुभ कर्मों और आचरणों से शूद्र ब्राह्मणत्व को प्राप्त होता है, और वैश्य क्षत्रियत्व को ॥ १६ ॥

शूद्र के स्वभाव, कर्म उत्तम हों तो द्विज से बढ़कर है।

स्वभावः कर्म च शुभं यत्र शूद्रेऽपि तिष्ठति ।
विशिष्टः स द्विजातेर्वै विज्ञेय इति मेमतिः ॥ ४९ ॥
॥ महा. दान-धर्म पर्व अ. १४३|४९ ॥

मेरा तो ऐसा विचार है कि यदि शूद्र के स्वभाव और कर्म दोनों ही उत्तम हों, तो वह द्विजाति से भी बढ़ कर मानने योग्य है।

ब्राह्मण का प्रधान हेतु सदाचार है

न योनिर्नापि संस्कारो न श्रुतं न च संततिः ।
कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम् ॥ (५०)
॥ महा. दान-धर्म. अ. १४३।५० ॥

ब्राह्मणत्व की प्राप्ति में न तो योनि न संस्कार न शास्त्र ज्ञान और न संतति ही कारण है। ब्राह्मणत्व की प्राप्ति का हेतु एक सदाचार ही है।

सदाचारी शूद्र भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो जाता है

सर्वोऽयं ब्राह्मणो लोके वृत्तेन तु विधीयते ।
वृत्ते स्थितस्तु शूद्रोऽपि ब्राह्मणत्वं नियच्छति ॥ (५१)
॥ महा. दान-धर्म अ. १४३।५१ ॥

लोक में यह सारा ब्राह्मण समुदाय सदाचार से ही अपने पद पर बना हुआ है। सदाचार में स्थित रहने वाला शूद्र भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकता है।

ब्रह्म ज्ञान ही ब्राह्मणत्व का कारण है

ब्राह्मण: स्वभाव: सुश्रोणि सम: सर्वत्र मेमति: ।
निर्गुणं निर्मलं ब्रम्ह यत्र तिष्ठति स द्विज: ।। (५२)
।। महा. दान-धर्म पर्व अ. १४३।५२ ।।

सुश्रोणि ! ब्रह्म का स्वभाव सर्वत्र समान है। जिसके भीतर उस निर्गुण और निर्मल ब्रह्म का ज्ञान है, वही वास्तव में ब्राह्मण है ऐसा मेरा विचार है।। प्र पृ ५९३८-गीता प्रेस ।।

अध्याय के अन्त में शिवजी ने अपने वक्तव्य का सार बताया है--

ऐ तत् ते गुह्यमाख्यातं यथा शूद्रो भवेद्द्विज: ।
ब्राह्मणो वा च्युतो धर्माद् यथा शूद्रत्व माप्नुते ।। (५९)
।। महा. दान-धर्म अ. १४३।५९ ।।

गिरि राजकुमारी ! शूद्र धर्माचरण करने से जिस प्रकार ब्राह्मणत्व को प्राप्त करता है, तथा ब्राह्मण स्वधर्म का त्याग करके जाति से भ्रष्ट होकर जिस प्रकार शूद्र हो जाता है, यह गूढ़ रहस्य की बात मैंने तुम्हें बतला दी। पृ. ५९३९ गीता प्रेस।

कितना स्पष्ट विवरण शिवजी का महाभारतकार ने वर्णित किया है !. क्या जाति के विनाशक कुछ इससे ही समझेंगे–?

शौनक की सन्तान में चारों वर्ण ।

पुत्रो गृत्समदस्यापि शुनको यस्य शौनकाः ।
ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैव च ॥
॥ हरिवंश पुराण अ. २९।८ ॥

गृत्समद के पुत्र शुनक और उसके शौनक पुत्र हुआ । और उस शौनक की ब्राह्मण-क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सन्तानें हुईं ।

कर्महीन ब्राह्मण चाण्डाल होता है ।

क्रियाहीनश्च मूर्खश्च सर्वं धर्म विवर्जितः ।
निर्दया सर्व भूतेषु विप्रश्चाण्डाल उच्यते ॥ अत्रिस्मृति (३८०)

जो ब्राह्मण क्रिया से हीन, मूर्ख है, सब अपने कर्त्तव्य धर्मों से परे रहता है, सब भूतों पर निर्दई है, वह चाण्डाल है ।

इन्द्र ब्राह्मण पुत्र होने पर भी कर्म से क्षत्रिय बना ।

इन्द्रो वै ब्रह्मणः पुत्रः क्षत्रियः कर्मणा भवत् ।
ज्ञातीनां पाप वृत्तीनां जघान नवतीर्नव ॥ (११)
महाभारत-शान्ति पर्व अ. २२।११

देखिये, 'इन्द्र' ब्राह्मण के पुत्र हैं, किन्तु कर्म से क्षत्रिय हो गये हैं । उन्होंने 'पाप' में प्रवृत्त हुए अपने ही भाई बन्धुओं में से आठ

सौ दस व्यक्तियों को मार डाला।

जैसा हम पहिले लिख चुके हैं कि चारों वर्ण ही नित्य कर्म करते थे।

इसी के अनुरूप ही वानर जाति भी नित्य कर्म करती थी

रावण युद्ध करने के लिए किष्किन्धा में गया तो वाली के मन्त्री--अङ्गद--सुग्रीव ने कहा कि तेरे साथ वाली के अतिरिक्त और कौन युद्ध कर सकता है ? मगर

चतुर्भ्योऽपि समुद्रेभ्यः सन्ध्यामन्वास्य रावण।
इमं मुहूर्तमायाति वाली तिष्ठ मुहूर्तकम्॥ (६)

वाल्मी. उत्तर कांड सर्ग ३४।६

रावण ! चारों समुद्रों से सन्ध्योपासना करके वाली अब आते ही होंगे, आप दो घड़ी ठहर जाइये। पृ० १५४५।

किन्तु रावण न ठहरा। और पता पूंछकर वहां ही चला गया। उसने जाकर देखा कि वाली सन्ध्या कर रहा है। (११)

इत्येव मतिमास्थाय वाली मौन मुपाश्रितः।
जपन् वै नैगमान् मन्त्रांस्तस्थौ पर्वत राडिव॥ (१८)

वाल्मीकि रा. उत्तर कांड ३४ सर्ग

ऐसा निश्चय करके वाली मौन ही रहे और वैदिक मन्त्रों का जप करते हुए गिरिराज सुमेरु की भांति खड़े रहे।

सांन्यासी शूद्र के घर भिक्षा कर सकता है।

भिक्षा चतुर्षु वर्णे विगर्ह्यान् वर्जयंश्चरेत्।
सप्ता गारान् सक्लृप्तास्तुष्येल्लब्धेन तावता ॥ (१८)
भागवत स्कन्ध ११ अ. १८--गीता प्रेस।

संन्यासी को चाहिये कि जाति च्युत और गोघाति आदि पतितों को छोड़कर चारों वर्णों की भिक्षा ले। केवल अनिश्चित सात घरों से जितना मिल जाये उतने से ही सन्तोष करले।

म्लेच्छ ब्राह्मण हो जाता है।

ममा नुस्मरणं नित्यं भक्त्या श्रद्धा पुरस्कृतम।
षोडशांगा भक्ति रियं यस्मिन्म्लेच्छेपि वर्तते ॥
विप्रेन्द्र: स मुनि: श्रीमान्स जात्य: स च पंडित:। (२७) ८८
भविष्य पु. ब्राह्म पर्व अ. १५१।

सूर्य ने कहा नित्य प्रति भक्ति और श्रद्धा से जो मुझको स्मरण करता है यह १६--सोलह अङ्ग सम्पूर्ण भक्ति है। यह भक्ति जिस म्लेच्छ में भी वर्तमान हो, वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है। वही मुनि है, वही जाति से उत्तम है, वही पण्डित है।

सत्य काम जाबाल

ऋषि हारिद्रुम गौतम ने अज्ञात कुल सत्य काम को केवल सत्य बोलने पर ही ब्राह्मण मानकर पढ़ाना आरम्भ कर दिया। जब सत्य काम पढ़ने ऋषि के पास गया, तो ऋषि ने गोत्र पूछा यथा :—

तँहो वा च किङ्गोत्रोनु सोम्या सीति सहो बाच नाहमेतद् वेदभो यद् गोत्रोऽहमस्म्य पृच्छं मातरँसा मा प्रत्य ब्रवीद् बह्वहं चरन्ती परिचारिणी यौवने त्वामलभे साऽहमे तन्नवेद यद् गोत्रस्त्वमसि जबालातु नामाहमस्मि सत्य कामो नाम त्वमसीति सोऽहँसत्य कामो जाबालोऽस्मिभो इति--छान्दो. ४ खण्ड ४/४ ।

सत्य काम जाबाल को हारिद्रुमत गौतम ने पूछा तू किस गोत्र वाला है बच्चा ? सत्य काम ने उत्तर दिया "भगवन् ! मैं यह नहीं जनता कि मैं किस गोत्र वाला हूं । मैंने माता को पूछा था माता ने मुझे उत्तर दिया, कि यौवन काल में बहुत जन परिचर्या करती हुई मैंने तुझे प्राप्त किया है । इसलिए मैं नहीं जानती, तू किस गोत्र वाला है । जबाला तो मैं हूं और सत्यकाम तेरा नाम है अतः भगवन ! मैं सत्य काम जाबाल हूं ।" सत्यकाम के इस कथन पर ऋषि ने कहा :—

त्वा नेष्ये न सत्यादगा इति ॥ अ. ४ । खण्ड ४।५

तू सत्य से विचलित नहीं हुआ । समिधा-ला तेरा उपनयन करता हूं । इससे सिद्ध है कि केवल सत्य बोलने पर ही सत्यकाम को यज्ञोपवीत का अधिकारी समझ कर ऋषि पढ़ाने लग गये ।

महाभारत का निर्णय

जनकजी ने पाराशरजी से पूछा :--

यत्र तत्र कथं जाताः स्वयोनिं मुनियो गताः ।
शुद्ध योनौ समुत्पन्ना वियोनौ च तथा परे ॥ (११)
महाभा. शान्ति पर्व अध्या. २९६।११

(जनकजी ने पूछा) ऋषि, मुनि जहां-तहां जन्म ग्रहण करके अर्थात् जो शुद्ध योनियों में और दूसरे जो विपरीत योनियों में उत्पन्न हुए हैं, वे सब ब्राह्मणत्व को कैसे प्राप्त हुए ?

इसका उत्तर पाराशरजी ने दिया, वह नीचे लिखते हैं :--

पिता महश्च मे पूर्वं मृष्य शृङ्गश्च काश्यपः ।
वेदस्ताण्ड्यः कृपश्चैव कक्षीवान् कमठादयः ॥ (१४)
यव क्रीतश्च नृपते द्रोणश्च वदतां वरः ।
आयुर्मतङ्गो दत्तश्च द्रुपदो मत्स्य एव च ॥ (१५)

एते स्वां प्रकृतिं प्राप्ता वैदेह तपसोऽऽश्रयात् ।
प्रतिष्ठिता वेद विदो दमेन तपसैवहि ॥ (१६)

महाभारत शान्ति पर्व अ. २९६

विदेहराज ! मेरे पितामह वसिष्ठजी, काश्यप-गोत्रीय ऋष्यशृङ्ग, वेद ताण्ड्य, कृप, कक्षीवान् कमठ आदि यवक्रीत, वक्ताओं में श्रेष्ठ द्रोण, आयु मतङ्ग, दत्त, द्रुहद तथा मत्स्य-ये सब तपस्या के आश्रय लेने से ही अपनी-अपनी प्रकृति को प्राप्त हुए थे। इन्द्रिय संयम व तप से ही वे वेदों के विद्वान् तथा समाज में प्रतिष्ठित हुए थे ।

शुकदेवजी को मोक्ष धर्म का उपदेश देते हुए राजा जनक ने कहा :--

ज्योतिरात्मनि नान्यत्र सर्व जन्तुषु तत समम् ।
स्वयं च शक्यते द्रष्टुं सुसमाहित चेतसा ॥

महाभा. शान्ति पर्व मोक्ष धर्म पर्व अध्या. २६/३२
५-५३-६

(शुकदेव !) अपने भीतर ही आत्मज्योति का प्रकाश है, अन्यत्र नहीं । वह ज्योति सम्पूर्ण प्राणियों के भीतर समान रूप से स्थित है । अपने चित्त को भली भांति एकाग्र करने वाला उसको स्वयं देख सकता है । इस श्लोक में प्रत्येक मनुष्य के लिए उपदेश है कोई भी हो, नीच वर्ण वाला भी चमक उठता है पाराशर ने कहा:--

यथोदय गिरौ द्रव्य सनिकर्षेण दीप्यते ।
तथा सत्संनिकर्षेण हीनवर्णोऽपि दीप्यते ॥

महा. शान्ति. मोक्ष पर्व अ. ५३ श. ४.पृष्ठ ५२०० गीता प्रेस

जैसे सूर्य का सामीप्य प्राप्त होने से उदयाचल पर्वत की प्रत्येक वस्तु चमक उठती है उसी प्रकार साधु पुरुषों के निकट रहने से नीच वर्ण का मनुष्य भी सद्गुणों से सुशोभित होने लगता है।

नीच वर्ण कौन है--यह सब सोचलें ?

अज्ञात बच्चे का वर्ण

युधिष्ठिर महाराज के प्रश्न पर अज्ञात बच्चे के वर्ण के लिए भीष्मजी ने कहा :—

अस्वामि कस्य स्वामित्वं यस्मिन् सम्प्रति लक्ष्यते।
यो वर्णः पोषयेत तं च तद्वर्णस्तस्य जायते ॥
महा. दान-धर्म पर्व अ, ४९।२१

वर्तमान समय में जो उस अनाथ बच्चे का स्वामी दिखाई देता है और उसका पालन-पोषण करता है, उसका जो वर्ण है, वही उस बच्चे का भी वर्ण होजाता है। फिर भीष्मजी ने कहा :—

आत्मवत् तस्य कुर्वीत संस्कारं स्वामिवत् तथा।
त्यक्तो माता पितृभ्यां यः सवर्णं प्रति पद्यते ॥
महा. दान-धर्म अ. ४९।२३

बेटा ! जिसको माता-पिता ने त्याग दिया है, वह अपने स्वामी (पालक) पिता के वर्ण को प्राप्त होता है। इसलिए उसके पालन करने वाले को चाहिये, कि वह अपने ही वर्ण के अनुसार उसके संस्कार करे। अब तो भीष्मजी ने स्पष्ट कर दिया कि त्यागा

हुआ। लडका चाहे शूद्र का ही क्यों न हो यदि उसका पालक ब्राह्मण है तो ब्राह्मण के ही सदृश उसके संस्कार करे । जन्म का झगडा जाता रहा ।

युधिष्ठिर महाराज ने भीष्मपितामह से पूछा :—

क्षत्रियो यदि वा वैश्यः शूद्रो वा राज सत्तम ।
ब्राह्मण्यं प्राप्नु याद् येन तन्मे व्याख्यातुर्महसि ।।३।।
महा. दान-धर्म पर्व अ. २७-३ पृ. ५५७२

नृप श्रेष्ठ ! यदि क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र ब्राह्मणत्व प्राप्त करना चाहे तो वह किस उपाय से उसे पा सकता है, यह मुझे बताइये ?

इसके लिय दो गाथायें समझने के लिए दी हैं । गाथायें बहुत लम्बी हैं अतः आवश्यक अंश उसके लिखेंगे । पहिले मतङ्ग की कथा है । इस पर भीष्मजी ने कहा :—

इस सन्दर्भ में जानकार मनुष्य मतङ्ग और गर्दभी के संवाद रूप एक प्राचीन इतिहास का उदाहरण दिया करते हैं । (७) अगले श्लोकों का अनुवाद हम गीता प्रेस गोरखपुर के अनुसार लिख रहे हैं :—

द्विजातेः कस्यचित् तात् तुल्य वर्णः सुतस्त्वभूत् ।
मतंगो नाम नाम्ना वै सर्वैः समुदितो गुणैः ।।८।।
महा राजधर्म पर्व अ. २७।८

तात ! पूर्व काल में किसी ब्राह्मण के एक मतङ्ग नामक पुत्र हुआ, जो अन्य वर्ण के पुरुष से उत्पन्न होने पर भी ब्राम्हणोचित संस्कारों के प्रभाव से उनके समान वर्ण का ही समझा जाता था। वह समस्त सद्गुणों से सम्पन्न था। अगले दो श्लोकों में है कि एक दिन उसके पिता ने किसी यजमान के घर यज्ञ कराने को भेजा। रथ में गधी के साथ एक छोटा सा गधा था। उसको मतङ्ग ने इतना मारा कि उसकी नाक में घाव हो गया। पुत्र को घाव हुआ देखकर गधी ने समझाया।

"मा शुचः पुत्र चाण्डालस्त्वधि तिष्ठति" (११)
महा. अ. २७।११

बेटा ! शोक न करो। तुम्हारे ऊपर ब्राम्हण नहीं चाण्डाल सवार है।

श्लोक १३ में कहा--कि यह चाण्डाल योनि होने से वैसा ही कर्म करता है।

गधी की ऐसी बातें सुनकर मतंग रथ से उतर पड़ा और गधी से बोला, कि "हे गर्दभी! मुझे सारी बात मेरे चाण्डाल होने की बता।" श्लोक १५-व १६-फिर गधी ने उत्तर दिया कि :—

ब्राम्हण्यां वृषलेनत्वं मत्तायां नापितेनह। दान पर्व
जातस्त्व मसि चाण्डालो ब्राम्हण्यं तेनतेऽनशत्॥
२१-१७--पृ. ५५७२

मतंग ! तू यौवन के मद से मतवाली हुई एक ब्राम्हणी के पेट से शूद्र जातीय नाई द्वारा पैदा किया गया, इसलिए तू चाण्डाल

है। तेरी माता के इसी व्यभिचार कर्म से तेरा ब्राम्हणत्व नष्ट हो गया है। यह सुनकर मतग घर लौट आया और पिता को सब बात कह कर ब्राम्हणत्व प्राप्त करने के लिए तप करने चला गया।

मतङ्ग ने तप करते-करते अपना शरीर भी सुखा लिया। इन्द्र से बहुत देर झगड़ा इस बात पर रहा कि ब्राम्हणत्व की प्राप्ति कठिन है। अन्ततः तप करते-करते मूर्छित होकर जब गिर गया तो फिर इन्द्र ने वर दिया :—

छन्दो देव इति ख्यातः स्त्रीणां पूज्यो भविष्यसि।
कीर्तिश्चतेऽतुला वत्स त्रिषु लोकेषु यास्यति॥

महा. दान-धर्म पर्व अध्य. २९-२४

इन्द्र ने वर दिया--"वत्स ! तुम स्त्रियों के पूजनीय होओगे; छन्दो देव के नाम से तुम्हारी ख्याति होगी; और तीनों लोकों में तुम्हारी अनुपम कीर्ति का विस्तार होगा।

इस कथा से स्पष्ट है कि मतङ्ग अपने तप के बल से चाण्डालत्व के दोष से मुक्त होकर उच्चतम पदवी को प्राप्त हो गया और जन्मगत कलङ्क खतम होगया।

दूसरी कथा जो क्षत्रिय से ब्राम्हण बनने की भीष्मजी ने सुनाई वह वीतहव्य की थी। सब कथा न लिखकर केवल एक ही श्लोक लिखता हूँ उससे ही मेरा तात्पर्य पूर्ण हो जायेगा।

एवं विप्रत्वमगमद् वीतहव्यो नराधिपः।
भृगोः प्रसादाद् राजेन्द्र क्षत्रियः क्षत्रियर्षभ॥

महा. दान-धर्म पर्व अध्या. ३०-६६

राजेन्द्र ! क्षत्रिय शिरोमणे ! इस प्रकार राजा वीतहव्य क्षत्रिय होकर भी भृगु के प्रसाद से ब्राम्हण हो गए ।

विश्वामित्र के पुत्र चांडाल होगए

नाभि बादयते ज्येष्ठं देवरातं नराधिप ।
पुत्रा पञ्चाश देवापि शप्ता: श्वपचतां गता: ।।
महा. दान-धर्म पर्व अध्या: ३२ लो ८ पृ. ५४३८

नरेश्वर ! शुन: शेप देवताओं के देने से देवरात नाम से प्रसिद्ध हो विश्वामित्र का ज्येष्ठ पुत्र हुआ । उसके छोटे भाई-- विश्वामित्र के अन्य पचास पुत्र उसे बड़ा मानकर प्रणाम नहीं करते थे । इसलिए विश्वामित्र के शाप से सबके सब चाण्डाल हो गए । वर्ण बदलने का यह एक प्रत्यक्ष उदाहरण है । ऐसे तो बहुत उदाहरण हैं ।

गुणों से ही ब्राह्मण बनता है

सत्यं दान मथा द्रोह आनृशंस्यं त्रपा घृणा ।
तपश्च दृश्यते यत्र स ब्राम्हण इति स्मृत: ।।
शान्ति पर्व अध्या. ८८ श. ४

जिस में सत्य, दान, द्रोह न करने का भाव, क्रूरता का अभाव, लज्जा, दया और तप यह सद्‌गुण देखे जाते हैं वह ब्राम्हण हैं ।

जो गुण जिस में हों उसे वही माना जाय

शूद्रे चैतद्भवेल्लक्ष्यं द्विजे तच्च न विद्यते ।
न वै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राम्हणा न च ब्राम्हणः ॥
(८) अ. ८८

उपर्युक्त सत्य आदि सात गुण यदि शूद्र में दिखाई दें और ब्राम्हण में न हों तो वह शूद्र नहीं है, और वह ब्राम्हण ब्राम्हण नहीं है। इस प्रमाण से सिद्ध है कि जो सात गुण ऊपर कहे यदि जन्मजात ब्राम्हण कहलाने वाले में नहीं--तो वह ब्राम्हण नहीं कहा जा सकता। और शूद्र में ऐसे गुण विद्यमान हों तो उसे ब्राम्हण ही मानना चाहिये।

पहिले सब ब्राह्मण ही थे

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राम्ह मिद जगत् ।
ब्रम्हणा पूर्व सृष्ट हि कर्मभिर्वर्णता गतम् ।।
मोक्ष धर्म पर्व ३३-८८-१० पृ. ४९०१

भृगुजी ने कहा--मुने ! पहिले वर्णों में कोई अन्तर नहीं था ब्रम्हाजी से उत्पन्न होने के कारण यह सारा जगत ब्राम्हण ही था। पीछे विभिन्न कर्मों के कारण उनमें वर्ण भेद होगया। पहिले जब कर्म से वर्ण भेद हुआ तो अब भी कर्म से हो सकता है। यथा:—

इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तर गताः ।
धर्मो यज्ञ क्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते ॥ (१४)
महा. शान्ति पर्व अ. १८८/१४

इन्हीं कर्मों के कारण ब्राम्हणत्व से अलग होकर वे सभी ब्राम्हण दूसरे-दूसरे वर्ण के हो गए। किन्तु उनके लिये नित्य धर्मानुष्ठान और यज्ञ कर्म का कभी भी निषेध नहीं किया गया।

भृगुजी कहते हैं कि धर्म और यज्ञादि कार्यों में कभी भी किसी वर्ण के लिए निषेध नहीं है। यह चारों वर्ण कर सकते हैं। जैसा कि ऊपर लिखा गया है। इसी प्रकार श्रीमद्भागवत में भी सब वर्णों के धर्म बताकर अन्त में लिखा है कि :—

> यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसोवर्णाभिव्यञ्जकम्।
> यदन्यत्रापि दृश्येत तत् तेनैव विनिर्दिशेत्। (३५)
>
> भागवत सकन्ध सप्तम अ. ११-पृ. ८४६

जिस पुरुष के वर्ण को बतलाने वाला जो लक्षण कहा गया है यदि दूसरे वर्ण वाले में भी मिले तो उसे भी उसी वर्ण का समझना चाहिये।

चारों वर्णों को मन्त्र का अधिकार

> ब्रह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा ये शचयोऽमलाः।
> तेषां मन्त्राः प्रदेया वै न तु सकीर्ण धर्मिणाम्।
>
> भविष्य पु उत्तर पर्व ४-अ १३-श्लो. ६२

ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और मल रहित, सदाचारी शूद्र, इन सबको मन्त्रों का उपदेश देना चाहिये। अधार्मिक पापियों को नहीं।

पहले यह सब सृष्टि परम पवित्र थी

प्रजास्ता ब्रह्मणा सृष्टाश्चातुर्वर्ण्य व्यवस्थिताः ।
सम्यक्छ्रद्धा समाचार प्रवणा मुनि सत्तम ।। (११)

यथेच्छावासनिरताः सर्व बाधा विवर्जिताः ।
शुद्धान्तः करणाः शुद्धाः कर्मानुष्ठान निर्मलाः ।। (१२)

विष्णु-पु० प्रथम अंश अ. ६ पृ. ३४-गीता प्रेस

हे मुनि सत्तम ! ब्रह्माजी द्वारा रची हुई वह चातुर्वर्ण्य विभाग में स्थित प्रजा अति श्रद्धा युक्त प्राचार वाली स्वेच्छानुसार रहने वाली, सम्पूर्ण बाधाओं से रहित अन्तःकरण वाली सत्कुलोत्पन्न और पुण्य-कर्मों के अनुष्ठान से परम पवित्र थी।

सभी मोक्ष प्राप्त करते थे

शुद्धे च तासां मनसि शुद्धेऽन्तः संस्थिते हरौ ।
शुद्ध ज्ञानं प्रपश्यन्ति विष्ण्वाख्यं येन तत्पदम् । (१३)

विष्णु. अंश १ अ. श्लो. १३

उसका चित्त शुद्ध होने के कारण उसमें निरन्तर शुद्ध स्वरूप श्री हरि के विराजमान रहने से उन्हें शुद्ध ज्ञान प्राप्त होता था। जिससे वे भगवान् के उस 'विष्णु' नामक परम पद को देख पाते थे। (चारों वर्ण मुक्ति को ज्ञान प्राप्त करके प्राप्त होते थे)।

उत्तम कर्म करने वाला शूद्र ब्राह्मण और नीच कर्म करने वाला ब्राह्मण शूद्र होता है।

कौशिक ने धर्मव्याध को कहा :—

साम्प्रतं च मतो मेऽसि ब्राह्मणो नात्र संशयः ।
ब्राह्मणः पतनीयेषु वर्त्तमानो विकर्मसु ॥ १३ ॥
दाम्भिको दुष्कृतः प्रायः शूद्रेण सदृशो भवेत् ॥ १४ ॥
महाभा. बन पर्व अ. २१६

मैं तो अभी आपको ब्राम्हण मानता हूं । आपके ब्राम्हण होने में संदेह नहीं है । जो ब्राम्हण होकर भी पतन के गर्त में गिराने वाले पाप कर्मों में फंसा हुआ है, और प्रायः दुष्कर्म परायण तथा पाखण्डी है, वह शूद्र के समान है । तथा

यस्तु शूद्रे दमे सत्ये धर्मे च सततोत्थितः ॥ १४ ॥
त ब्राम्हण महं मन्ये वृत्तेन हि भवेद् द्विजः ॥१५॥ उक्त पता

इसके विपरीत जो शूद्र होकर भी शम, दम, सत्य तथा धर्म का पालन करने के लिये सदा उद्यत रहता है, उसे मैं ब्राह्मण ही मानता हूं । क्योंकि मनुष्य सदाचार से ही द्विज होता है।

यहां तो स्पष्ट ही कह दिया कि सदाचार से मनुष्य द्विज बनता है ।

वर्ण बदल जाता है

महाभारत अनुशासन पर्व में पार्वती ने श्री महादेव से पूछा

है कि वैश्य कैसे शूद्र और क्षत्रिय किस कर्म से वैश्य, और ब्राह्मण किस कर्म से क्षत्रिय हो जाता है ? तथा शूद्र, वैश्य और क्षत्रिय इन तीन वर्णों के लोग किस प्रकार स्वभावतः ब्राम्हणत्व को प्राप्त हो जाते हैं ?

महेश्वर के उत्तर के कुछ श्लोक नीचे लिखते हैं :—

पार्वती का प्रश्न

एतन्मे संशयं देव वद भूत पतेऽनघं ।
त्रयो वर्णाः प्रकृत्येह कथं ब्राह्मण्यमाप्नुयुः ॥
महा. अनुशा. पर्व अध्या. १४३ ॥ ५ ॥

पार्वती ने पूछा—देव ! पाप रहित भूतनाथ ! मेरे इस संशय का समाधान कीजिये । शूद्र, वैश्य और क्षत्रिय--इन तीन वर्णों के लोग किस प्रकार स्वभावतः ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकते हैं !

श्री महेश्वर ने कहा

स्थितो ब्राह्मण धर्मेण ब्राह्मण्य मुप जीवति ।
क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा ब्रह्म भूय स गच्छति ॥ ८ ॥
महा. शान्ति. पर्व. अ. १४३.८

यदि क्षत्रिय अथवा वैश्य ब्राम्हण धर्म का पालन करते हुए ब्राम्हणत्व का सहारा लेते हैं तो वे ब्राह्मण भाव को प्राप्त हो जाते हैं ।

ब्राह्मण कैसे गिरता है

ब्राह्मणत्वं शुभं प्राप्य दुर्लभं योऽवमन्यते ।
अभोज्यान्नानि चाश्नाति सद्विजत्वात् पतेतवै ॥२२॥अनु.

जो शुभ एवं दुर्लभ ब्राह्मणत्व को पाकर उसकी अवहेलना करता है, और नहीं खाने योग्य अन्न खाता है वह निश्चय ही ब्राह्मणत्व से गिर जाता है।

आगे दुष्कर्मों से ब्राह्मण का गिर जाना लिखा है--फिर

एभिस्तु कर्मभिर्देवि शुभैरा चरितैस्तथा ।
शूद्रो ब्राह्मणतां याति वैश्यः क्षत्रियतां व्रजेत् ॥ २६ ॥

देवि ! इन्हीं शुभ कर्मों और आचरणों से शूद्र ब्राह्मणत्व को प्राप्त होता है, और वैश्य क्षत्रियत्व को।

शिव भक्तों ! देखलो शिव कह रहे हैं कि शूद्र ब्राह्मण होजाता है। इसके पश्चात आए हुए कई श्लोक पहिले लिखे गए हैं।

फिर द्विज कहलाने वाले सोचें कि जिन जातियों को उन्होंने विद्यादि अधिकारों से वञ्चित कर रक्खा था उन जातियों के लड़के बी. ए. और एम. ए. में तुम्हारे लड़कों से प्रथम आते हैं। क्या आप सोचेंगे--कि आपकी इस घातक नीति ने ही भारत देश को मूर्खता और दासता के गड्ढे में तो नहीं धकेल दिया ? क्या आपके इन अत्याचारों ने ही इन जातियों को यवन बना कर भारत का बंटवारा

तो नहीं करा दिया ? और करोड़ों को संख्या में ईसाई तो नहीं बना दिया ? क्या अब भी आप इस पर विचार करेंगे या नहीं कि अब भी तुम्हारी इस छूत-छात और तुम्हारे अमानुषीय अत्याचारों के कारण, जिनको आपने अपनी घृणा का निशाना बना रक्खा है, विधर्मी तो नहीं हो रहे ? यदि यही गति रही तो यह जातियां विधर्मी हो अपनी जनसंख्या को बढ़ाकर समूचे भारत पर अपना अधिकार कर लेंगी । और तुम्हारी अवस्था दासों के दास से भी भयंकर हो जायगी आओ, कुछ सोचो, और जाति रक्षा के साधनों पर चलो ।

अब वर्णव्यवस्था को समझने के लिये वंश परम्परा को देखिये:-

प्रसिद्ध रावण का वंश किस से चला ? पुलस्त्य सप्तर्षियों में गिने जाते हैं । पुलस्त्य के पुत्र वैश्रवा और वैश्रवा के पुत्र कुबेर, रावण, कुम्भकरण और विभीषण थे और शूर्पनखा कन्या । इन सब को राक्षस कहा जाता है । दैत्य, दानव भी कश्यप की सन्तान हैं ।

ययाति के पुत्रों की सन्तान

यदोस्तु यादवा जातास्तुर्वसोर्यवनाः स्मृताः ।
द्रुह्योः सुतास्तुवै भोजा अनोस्तु म्लेच्छजातयः ॥३४॥

पुरोस्तुपोरवो वंशोयत्र जातोऽसि पार्थिव ॥३५॥

महाभारत आदि पर्व अध्याय ८५

वैशम्पायन जनमेजय से कहते हैं, कि हे राजन्, यदु से यादव वंश, तुर्वसु से यवन वंश, द्रुह्यु से भोज वंश और अनु से म्लेच्छ वंश उत्पन्न हुए हैं। इससे स्पष्ट है कि राजा ययाति के पुत्रों से यवन म्लेच्छ आदि पैदा हुए और विभिन्न वंश चले।

ऐतरेय ऋषि कौन थे—

ऐतरेय ऋषि ने ऋग्वेद पर अनेक ग्रन्थ लिखे। ऐतरेय ब्राह्मण ऐतरेयोपनिषद आदि ग्रन्थ लिखे। इन के लिखित ग्रन्थ जाने बिना ऋग्वेद का तत्व ही नहीं जाना जा सकता।

ये ऐतरेय ऋषि दासी पुत्र थे। मही इनकी माता का नाम था और इनकी माता नीच जाति की दासी थी। इस कारण उसको इतरा भी कहते थे। इतरा शब्दार्थ ही नीच हैं। यथा--

इतरस्त्वन्यनीचयोः (अमर कोश)। जाति निर्णय ३०१।

कवष एलूष–इनके विषय में ऐतरेय ब्राह्मण इस प्रकार लिखता है :—

ऋषयो वैसरस्वत्यां सत्रमासत। ते कवष मैलूषं सोमादनयन। दास्याः पुत्रः कितवोऽब्राह्मणः कथं नोमध्ये दीक्षिष्टेति ? तं वहिर्धन्वो दवहन अत्रैनं पिपासा हन्तु सरस्वत्या उदकमा पादिति। स वहिर्धन्वो दूहलः पिपासया वित्त एतद पोनप्त्रीयम पश्यत ते वा ऋषयोऽब्रुवन् विदुर्वाइमं देवाउपेम ह्वयामहैति तथेति॥ ऐतरेय ब्राम्हण अ. ८।खं. १ (जाति निर्णय पृ. ३०१)

ऋषि लोग सरस्वती के तट पर यज्ञ करते थे। उन्होंने कवष एलूष को यज्ञ से बाहर निकाल दिया। क्योंकि एक तो वह दासी पुत्र और दूसरा कितव (जुआरी) था और अपने आचरणों से बहुत ही भ्रष्ट था। पश्चात् इसने अध्ययन रूप महा व्रत को धारण किया सम्पूर्ण ऋग्वेद का अध्ययन करने पर उसे वेद के नवीन-नवीन विषय भासित होने लगे। यह देख ऋषियों ने उसे बुलाया। इतना ही नहीं, किन्तु उसे आचार्य बनाकर यज्ञ किया।

मनु के दस पुत्रों की गति

मनोरिक्ष्वाकु नृग धृष्टशर्यातिनरिष्यन्त प्रांशुनाभागदिष्टक-रूषपृषध्रख्यादश पुत्रा बभूवुः ॥ ७ ॥

मनु के इक्ष्वाकु, नृग, धृष्टा, शर्याति, नरिष्यन्त, प्रांशु, नाभाग, दिष्ट, करूष और पृषध्र नामक दस पुत्र हुए ॥ ७ ॥

इन दस लड़कों में से कुछ का हाल नीचे लिखते हैं :—

पृषध्र गुरु वशिष्ठ के पास पढ़ते थे। रात्रि के समय गोशाला में व्याघ्र आगया। गौवें चिल्लाने लगी, तो पृषध्र ने खड्ग व्याघ्र को मारी। परन्तु वह गौ को लग गई, जिससे गौ की हत्या हो गई। इससे पृषध्र को शूद्र बना दिया गया।

तदन्वयाश्च क्षत्रियास्सर्वो दिक्ष्व भवन।
पृषध्रस्तु मनु पुत्रो गुरुगोवधाच्छूद्रत्वमगतम् ॥ १७ ॥

पुरुरवा की सन्तान सम्पूर्ण दिशाओं में फैले हुए क्षत्रियगण हुए। मनु का पृषध्र नामक पुत्र गुरु की गौ का वध करने के कारण शूद्र हो गया ॥ १७ ॥

पृषध्रो हिंसयित्वा तु गुरोर्गां जनमेजय ।
शापाच्छूद्रत्व मापन्नः ।। ६५६ ।।

हे जनमेजय ! पृषध्र गुरु की गौ मारकर शूद्र हो गया । इस विषय में भागवत भी यही कहता है ।

तं शशाप कुलाचार्यः कृतागसमकामतः ।
नक्षत्र बन्धुः शूद्रस्त्वं कर्मणा भवितामुना ।। ६ ।।

यद्यपि पृषध्र ने जान-बूझकर अपराध नहीं किया था, फिर भी कुल पुरोहित वशिष्ट ने उसे शाप दिया कि 'तुम इस कर्म से क्षत्रिय नहीं रहोगे, जाओ शूद्र हो जाओ' ।। ६ ।।

श्रीमद्भागवत स्कं. ६ अ. २

(नाभाग)

दिष्ट पुत्रस्तु नाभागो वैश्यता मगमत्त--
स्माद्बलन्धनः पुत्रोऽभवत् ।। १९ ।।

श्री विष्णु पुराण अंश ४ अ. १ श्लो. १९

दिष्ट का पुत्र नाभाग वैश्य होगया था । उससे बलन्धन नामक पुत्र हुआ ।। १९ ।।

इसी के विषय में भागवत में कहा है :—

नाभागो दिष्टपुत्रोऽन्यः कर्मणा वैश्यतां गतः ।।२३।।

श्रीमद्भागवत स्कन्ध ९ अ. २।२३

वह अपने कर्म के कारण वैश्य हो गया था। आगे चलकर फिर इसके पुत्र क्षत्रिय होगये।

(क्षत्रिय से ब्राह्मण हुए)

एते क्षत्र प्रसूता वै पुनश्चाङ्गिरसाः स्मृताः।
रथीतराणां प्रवराः क्षत्रोपेता द्विजातयः ।। १० ।।
विष्णु पुराण चतुर्थ अंश २ श्लो. १०

रथीतर के सम्बन्ध में यह श्लोक प्रसिद्ध है—रथीतर के वंशज क्षत्रिय सन्तान होते हुए भी आङ्गिरस कहलाये। अतः वे क्षत्रोपेत ब्राम्हण हुए ।। १० ।।

क्षत्रिय म्लेच्छ बने

राजा सगर ने अपने पिता के शत्रुओं से बदला लेने के लिए उन सब क्षत्रियों को मार डालने की प्रतिज्ञा की। उन में से कुछ वशिष्ठजी की शरण में चले गए। जब सगर उनको मारने के लिए वहां गये-तो गुरु वशिष्ठ ने कहा :—

अथैतान्वसिष्टो जीवन्मृतकान् कृत्वा सगरमाह ।।४३।।
वत्साल मैभिर्जीवन मृतकै रनुसृतैः ।।४४।।

एते च मयैवत्वत्प्रतिज्ञा परिपालनाय निज धर्म
द्विज सङ्ग परित्यागं कारिताः ।।४५।।

अंश ४ अ. ३ श्लो. ४३, ४४, ४५

वसिष्ठजी ने उन्हें जीवन्मृत सागर से कहा (४३) बेटा ! इन जीते जी मरे हुओं का पीछा करने से क्या लाभ है ? (४४) देख, तेरी प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिए मैंने इन्हें स्वधर्म और द्विजातियों के संसर्ग से वञ्चित कर दिया है। (४५) तब सगर ने गुरु का कहा मान उन्हें छोड़ दिया और किन्हीं के सिर मूंड दिये; किन्हीं की डाढ़ी रखवा दी; किसी का आधा सिर मुण्डवा दिया। और

निस्स्वाध्याय वषट्कारानेता नन्यांश्च क्षत्रियांश्चकार ॥४७॥
एते चात्मधर्म परित्यागा ब्राह्मणै: परित्यक्ता म्लेच्छतां ययु: ॥
(४८)
विष्णु पुराण अं. ४ अ. ३ श्लो. ४७, ४८

उनके समान अन्यान्य क्षत्रियों को भी स्वाध्याय और वषट्कारादि से वहिष्कृत कर दिया। (४७) अपने धर्म को छोड़ देने के कारण ब्राम्हणों ने भी परित्याग कर दिया; अत: वे म्लेच्छ हो गए। (४८) न जाने कितना जन समूह क्षत्रियों से म्लेच्छ बना दिया। इससे भी आपकी जन्मजात न रही।

पुराणों में यदि आप वंश की खोज करेंगे तो आपको सब में ऐसा ही मिलेगा। पुस्तक के विस्तारभय से हमने नमूने मात्र लिख दिये हैं।

जाति-पांति के विरुद्ध नेताओं की सम्मतियां

१. स्वर्गीय सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर :—

यदि हिन्दू धर्मोन्मत्त विधर्मियों के घातक आक्रमणों से अपनी रक्षा करना चाहते हैं तों उन्हें जाति-पाति का सर्वथा त्याग करके अपने को संगठित करना होगा।

२. स्वर्गीय पं० मोतीलाल नेहरू।—

जब तक जाति-पांति का नामोनिशान मिटा नहीं दिया जाता तब तक भारतवर्ष संसार के सभ्य राष्ट्रों में अपना उचित स्थान नहीं ले सकता।

३. स्वर्गीय पं० जवाहरलाल नेहरू :—

भारतवर्ष में जाति-पांति प्राचीनकाल में चाहे कितनी उपयोगी क्यों न हो पर इस समय सब प्रकार की उन्नति के मार्ग में यह बड़ी भारी बाधा और रुकावट बन रही है।

हमें इसको जड़ से उखाड़ अपनी सामाजिक रचना एक दूसरे ढंग से करनी होगी।

४. श्री विनायक दामोदर सावरकर :—

शुद्धि, छुआ-छूत निवारण और संगठन इत्यादि इस प्रकार के उद्देश्य इस एक ही कवच के अन्दर पाये जाते हैं कि जाति-पांति का झंझट तोड़ दो।

५. श्री राजा खलकसिंह जू देव बहादुर खनिया धाना राज्य :—

मेरा यह पक्का विचार है कि जन्म मूलक जाति-पांति और छुआ-छूत जैसी कुरीतियों के रहते हुए हिन्दू जाति कभी उन्नति नहीं कर सकती।

६. श्री भगवानदासजी एम. ए. काशी :—

वर्तमान काल में जाति प्रथा जिस रूप में प्रचलित है उसका एकान्त रूप से विनाश करना ही होगा। यदि भारत की जनता को नया जीवन प्राप्त करना है तो उसे वर्ण भेद के वर्तमान रूप को मिटा देना होगा। क्योंकि वह उन्नति के सभी मार्गों में बाधा उपस्थित कर रहा है।

७. स्वर्गीय श्री गणेशशंकर विद्यार्थी :—

मेरा पूर्ण विश्वास है कि जाति-पांति के जंजाल के टूटे बिना हिन्दुओं का उद्धार न होगा।

८. स्वर्गीय श्री श्रद्धानन्द :—

मैंने अपना यह नियम बना लिया है कि किसी ऐसे विवाह संस्कार में सम्मिलित नहीं हूंगा और न उस जोड़े को आशीर्वाद दूंगा जिस में जाति-पांति का बन्धन न तोड़ा गया हो।

९. स्वर्गीय लाला लाजपतराय :—

जाति-पांति हिन्दू धर्म का सबसे बड़ा कलंक है। ब्राह्मण और अब्राम्हण, जाट और गैर जाट और नाम मात्र ऊंच-नीच जातियों के वैमनस्य का यही मूल कारण है। और उसी ने अछूतपन को बल दिया है। जब तक हिन्दू जाति-पांति की बेड़ियों से मुक्त नहीं होते तब तक इनका एक जाति बनना असम्भव है!

१०. विश्ववन्द्य गांधी :—

जाति-पांति तोडकर विवाह आपत्तिजनक नहीं है, शूद्र पुरुष ब्राम्हण स्त्री से विवाह कर सकता है।

११. डाक्टर मुंजे :—

अन्तर्जातीय विवाह द्वारा ही हम जाति-पांति को मिटा सकते हैं।

१२. स्वामी सत्यदेव :—

जाति-पांति की दीवारों को गिरा दो, फूट के कारण को मिटा दो, तभी वास्तविक संगठन हो सकेगा।

१३. श्री. सी. वाई चिन्तामणि :—

वर्ण व्यवस्था मनुष्य की बनाई हुई है वह ईश्वर की ओर से कदापि नहीं हो सकती। जातीय भाव, जो उसकी कृपा से हमारे हृदय में जम गये हैं, लानत के योग्य हैं। आज इस बात की आवश्यकता है कि उसका खूब विरोध किया जाय। निःसन्देह इस घातक प्रथा ने हमारी जाति उन्नति को बहुत पीछे फेंक दिया है।

१४. सर सी० पी० राय :--

जब तक जन्म मूलक जाति भेद का अन्त न होगा और वर्ण व्यवस्था गुण कर्मानुसार न होगी, जाति-पांति के कृत्रिम भेद-भाव हमारे देश की उन्नति के मार्ग में बाधा सिद्ध हो रहे हैं इसलिए इन्हें शीघ्र दूर करना चाहिए।

१५. स्वामी रामतीर्थ :—

देश और धर्म तुमसे आशा करता है कि जाति-पांति के अत्यन्त कठोर नियमों को तुम ढीला कर डालोगे और भ्रातृ भाव के प्रकाश के लिए तुम कड़े वर्ण भेदों को नियन्त्रित कर लोगे।

१६. पं. सन्तरामजी बी. ए. :—

जाति-पांति ने शुद्धि, संगठन और दलितोद्धार की सभी चेष्टाओं को विफल कर दिया है। जब तक जाति-पांति है

तब तक यह तीनों बातें असम्भव हैं। हिन्दू समाज के सभी सच्चे हितचिन्तक इस बात को मुक्तकण्ठ से स्वीकार करते हैं।

१७. श्री देवराज प्रधान कन्या-महाविद्यालय जालन्धर :--

जाति-पांति के ऐसे अयोग्य बन्धनों ने हमें ऐसा अभिमानी, आलसी और कर्महीन बना दिया है कि हम मनुष्य कहला के भी योग्य नहीं रहे। यह कुप्रथा तोड़ने योग्य ही है।

१८. सर हरिसिंह गौड़ :—

जाति-पांति हिन्दुओं की एकता और उन्नति में बाधक है। इस हानिकारक जाति-पांति के विरुद्ध नवयुवकों को आन्दोलन करना चाहिए।

१९. श्री नारायण स्वामीजी :—

जाति-पांति का बन्धन हिन्दू जाति के लिए कलंक का टीका है और उसने सारी जाति को छिन्न-भिन्न कर रखा है। हिन्दू जाति के परस्पर घृणा और द्वेष का प्रचार इसकी कृपा का फल है। इसलिए आर्य जाति की उन्नति इसे तोड़ने पर ही अवलम्बित है।

१०. मालीराव जयकर :—

एक बात जो हमने स्वराज्य संग्राम में सीखी है वह यह है कि हमें जाति-पांति को सर्वथा मिटाकर जन्म की बड़ाई का त्याग कर देना चाहिए।

२१. श्री के. वट. राजन :—

वर्तमान जाति-पांति शास्त्र और तर्क दोनो के विरुद्ध है। हिन्दुओं की आपस की फूट का यही कारण है। यह राष्ट्रीय भावना के विरुद्ध है, जितना शीघ्र इसमें क्रांतिकारी सुधार होगा, उतना ही इससे देश और विशेषकर हिन्दुओं का कल्याण होगा।